



हम सब अमर हैं

पूर्णानन्द मिय

संस्करण १९९१ ई०

पृष्ठ २१

प्रकाशक—

पूर्णमित्र मिश्र

रातनगढ़ (राजस्थान)

प्रथम बार

मुद्रक—

श्री साधना प्रेस

रातनगढ़ (राजस्थान)

## भूमिका के दो शब्द

आज घात की नहीं बहुत बड़ा पुरानी है हमारे बंधे पुरानी। एक दिन अग्निहोत्रार नविनेना बहुत ही भुक्त के देवना बरगन समराज के घर आ पहुँच घोर उनसे पुछ बैठे देव। दुष्पी लम पर मनुष्य जब घर आना है तब क्या उसका अस्तित्व तथा मुदा के भिये भिद आना है अथवा क्या वह तब भी किसी न किसी रूप में वर्तमान रहना है। हम जाँचो मे इस विषय को लेकर २१ मस प्रचलित है— कुछ विचारक दूरतु के उत्तरात्त अन्ति के अस्तित्व का प्रतिपादन करते हैं जबकि कुछ दूसरे विचारक उनका ऐसी अस्तित्व को सिद्ध नहीं मानते। दूरतु के अस्तित्व होने के कारण मानही न अस्तित्व पर प्रमाण डाल सकते हैं हुआ कर बननाये।

नविनेना के इस उत्तर का उत्तर बरगन ने कुछ नविनेना जाँचो मे दिया था। यम के इस उत्तर मे नविनेना कीर उनके बाद घाने वाली हमारा मानक-नीति को बना कुछ मन्त्रों और मन्त्राचार विना— हम आज की अर्थ-भुक्त में न जाकर एक बात तो हम उत्तर कोन कि नविनेना ने जो बहुत बड़ा उदाहरण का बहुत बड़ा विचार-प्रकार का कोरि कोरि मानकों का उत्तर का। मानक इतिहास के इस घाटिबघोर के लेकर, जिसकी कारण कुछ भी न जान पाने के कारण जिसे हम आदि-इतिहास-मान कहते हैं, यादतब कोरि

कीर्ति भविष्यताओं की एक बहुत लम्बी परम्परा रही है जिन्होंने अपने सामने करते हुए अपने लक्ष्य-स्वप्नों का रैन देरा कर बरोत या प्रयत्न क्यों में "मृत्यु के बाद— क्या ?" इस प्रश्न की खोजगा मारी है।

"मृत्यु के बाद— क्या ?"— विद्वानों का यह एक सार्वभौम और सार्वकालिक प्रश्न रहा है। इस प्रश्न ने अरिबों सार्वभौम विचारकों, और वैज्ञानिकों के क्यों में अपने अपने समाधान प्रस्तुत करने वाले चमत्कारों की एक विरल परम्परा लम्बी परम्परा की भी शाल दी जग्य दिया है।

"इस सब समर है" नामक इस पुस्तक में मैंने सांख्यिक विज्ञान की कुछ अवधारणों को आधार बनाकर इस विषय प्रश्न का एक सुलभ दृष्टा-ता समाधान प्रस्तुत दिया है।

विज्ञान ने आज हमें बताया दिया है कि विषय-वस्तुओं की प्रत्येक वस्तु की जगह अलग-अलग स्थिति है और हम अपनी इच्छाओं अथवा वैज्ञानिक अवधारणों द्वारा विज्ञान अध्ययन कर सकते हैं हमें हमें बतार्थ (Matter) कहते हैं। गुणवत्ता वस्तुओं और प्रमाण की लक्षणों, अणुओं और कणों वस्तु, हवा की और जहाँ तारे और उनके यह-उपग्रह मनुष्य और ब्रह्म— यह सब बतार्थ के ही विषय विज्ञान का प्रश्न है।

बतार्थ और इस कारण, विज्ञान-वस्तुओं के अतिरिक्त और अविनाशक है। इस अविनाशकता के विपरीत का जो महत्त्व बुद्धि-व्यय बनाकर आत्मा की लक्ष्य मेवा बड़ा मुश्किल है हमारी अपनी

ब्रह्मना-शक्ति के ब्रूने के बाहर है। पृथ्वी के बनकर ब्रह्मना तक  
या पहुँचने के लिये ब्रह्माण की एक सेकण्ड के कुछ ही अधिक समय  
लगत है। दूसरी ओर प्राकृतिक दूरबीनों में हमें उन तारों की देखा  
जाने की सामर्थ्य दी है जिनके ब्रह्माण विद्यमान हो परन्तु अभी तक  
हमारी पृथ्वी की ओर लगाना ही देखे जाने की ओर हमें प्रायः दिना बढ़  
रहे हैं। यह तारे हमारी पृथ्वी से लगभग २० ००० ००० ०००,  
००० ०००,००० ० ० बीसो-बीस दूर हैं। ब्रह्मना की ओर इन तारों  
के इन ही ब्रह्माणों की सापेक्ष तुलना करने पर हम एक छोटा-सा  
धमका लगा सकते हैं कि एक सेकण्ड की तुलना में २ परन्तु ब्रह्माण  
बर्न गया है। परन्तु अनन्तता (Infinity) की तुलना में तो  
हो परन्तु बर्न भी बहुत एक मध्यम से बिन्दु ही है।

अबेरी पक्षों में अब हम ब्रह्माण की ओर आकर आगे  
बढ़ा कर देखते हैं तो हमें यह ब्रह्माण तारों में अचानक ब्रह्माण  
दिखाता है। बहुत कुछ सम्भव है कि हमारी दृष्टि-शक्ति के इन बार  
बोर्ड की ओर तारे तो न हों परन्तु कुछ की ओर कर देगा। जो हमारे  
लिये बिन्दुय प्रकट हो। और इन कारण हमारी नज़र-नज़र में पड़े  
हों। जाते जो हो एक बात का तो हमें पूरा विश्वास है कि यह  
मध्य की ब्रह्माण के ही ब्रह्माण होवे और इन बात का ठह ब्रह्माण  
होना कि हमारे सामर्थ्य के अन्तर्गत है और इन बार की ब्रह्माण-ब्रह्माण  
के ब्रह्माण बिन्दुय लागू होते हैं जो हमारे दृश्य दृश्य के ब्रह्माण-ब्रह्माण  
दिशों पर लागू हैं।

विज्ञान में हमें यह भी समझना है कि पदार्थ की न तो मरने निरुद्ध निमित्त ही बिना जा सकता है और न उत्पत्ति मरना मर ही बिना जा सकता है। हम केवल पदार्थ की एक रूप से दूसरा रूप बदलते हुए या बढ़ते हुए ही बात कर सकते हैं। पदार्थ, अपने सम्पूर्ण रूप में हमेशा बिरुद्ध से रहता बना आता है और आगे भी हमेशा ऐसा ही बना रहेगा— अतिसूक्ष्म और अतिसूक्ष्म, मरने ही यह बीच बीच में अपने रूप बदलता रहे।

हममें से प्रत्येक मनुष्य का शरीर भी पदार्थ (Matter) का ही बना हुआ है। मान पदार्थ से ही बना होने के कारण हमारा शरीर भी अपने कारण-द्रव्य बनावट के अनुसार ही अतिसूक्ष्म और अतिसूक्ष्म है। ही यह अपने शरीर में परिवर्तन आकर कर लेता है। जिसे हम मृत्यु कहते हैं वह हमारे शरीर के एक रूप बदलने की एक बिना मात्र है। यही नहीं शरीर का यह रूप— परिवर्तन का रूप तो हमारे जन्म के से लाव ही कारण ही बना है, मृत्यु तो इन प्रक्रिया की एक लक्ष्य मात्र है।

येना कि विज्ञान का प्रत्येक विद्यार्थी जानना है पदार्थ कुछ चीज शरीर में हो बना हुआ रहता है। दोष, तरल और द्रव्य। इन तीनों चीजों में बर्तमान पदार्थ का मूलभूत अंग होता है पदार्थ। पदार्थ ही अपने बनावट शक्ति (Energy) का रूप बदल करता है और इन शक्ति के विविध रूपों में अणु, विद्युत् और द्रव्य विज्ञानों द्वारा है।

हमारे शरीर का निर्माण करने वाला पदार्थ भी निरन्तर इलेक्ट्रन किरणों के रूप में बहता रहता है। यह किरणें हमारे समूचे शरीर के प्रत्येक बटक परमाणु से, बोटी से लेकर एड़ी तक निरन्तर निकलती रहती और चारों ओर घनत्व घावाय में गति करती रहती हैं। हमारे भौतिक शरीर के विष्फुल समुच्च ही हमारी यह इलेक्ट्रन-किरणें भी एक बुरा घावा बनाकर निकलती रहती हैं। यह किरणें अपनी १८६,००० मील प्रति सेकण्ड की गति से यों घनत्व घूम (Space) में घावे और घावे बहती बनी जाती हैं। जब से लेकर मृत्यु पर्यन्त यह प्रकाश-किरणें यों हमारे पूरे शारीरिक गाके की छोटी हुई हम में से प्रत्येक व्यक्ति का एक प्रकाश-मय जीवन-मञ्च (Life act) बना देती हैं जो निरन्तर गतिशील रहता है। इसी प्रकाशमय जीवन मञ्च के रूप में, जो कभी नट नहीं हो सकता, हम सब बिराला तक गति करते हुए चल रहे रहते हैं।

घनत्व घूम क्षेत्र (Space) में निरन्तर विद्युत्-सूचन (electric storms) बहते रहते हैं। क्योंकि हमारा यह प्रकाशमय जीवन-मञ्च की विद्युत्-गति-सूच होता है इसलिये वह कभी कभी इन सूचनों की बहक में आकर चूल्ही पर बापित लोट जाता है और चूल्ही की बलराशियों द्वारा बहका आकर जीवन के रूप में रानी-सूचों के रूप और घूम में परिणत होकर उनकी सम्बोध प्रक्रिया में हमें फिर नहीं जग्य दे जाता है। ऐसे ही हम पुनर्जन्म कहते हैं।

घाने बुरे जगों का हान बहमाने घाने घाने घानों के



कृतात्म इस घबहर मुनते घोर पड़ते रहने हैं। यह सब इस प्रक्रिया की ही चेन है।

मेरी इन पुस्तक का मूल मूल यह प्रवाचनमय जीवन-मन्त्र ही है। इस मूल मूल को बोधमय बनाने के लिये मैंने धातुनिक विज्ञान की घनेक शाखाओं की सर्व माय्य उपमन्त्रियों का धातुनिक लिखा है जिनमें शरीर विज्ञान, प्राण रसायन विज्ञान और धातु नादिक विज्ञान प्रमुख हैं।

मनुष्य-शरीर के घंटों और खपों का बुरा परम्पु ललित विवरण देकर मैंने उनके मूल धातु धातुनिकों और धातुनिकों एमिटा का तात्पर्य विवरण कर यह लिखाया है कि यह जीवन १३ या १४ मूल तत्वों (elements) के ही चेन है। फिर एक परिच्छेद में मूल तत्वों का विवरण कर यह लिखाया है कि एक केन्द्रित होने हुए भी वह सब धातुनिक का है जीवन तीन तत्वों के ही चेन है जो इन्फ्लेम औरन और मूल्य हैं। इसी परिच्छेद में ही मैंने धातु के विविध रूपों - प्रकाश, विद्युत्, द्रव्यत्व का बुरा धातु दे दिया है।

बोधने परिच्छेद में मैंने इन तीनों तत्वों के तत्त्वतः मन्त्राव में जीवन के धातुनिकों की बुरी कहानी देकर लड़े परिच्छेद में मानव धातु की बनारत और बुद्धि का धातु निगलर प्राणी की बुद्धिधारा और धातु के धातुनिकों पर धातुनिक प्रकाश दिया है। नाउरें परिच्छेद में मैंने बुराने धातुनिक धातुनिकों और धातुनिक धातुनिकों द्वारा हमारे इन धातुनिक धातुनिक का ही धातुनिक बनाने रहने के धातुनिकों का धातुनिक





## विषय-सूची

|                                   | पृष्ठ   |
|-----------------------------------|---------|
| मृत्यु के विषय मनुष्य का धर्मिण   | १ १६    |
| हमारे धर्म की रचना                | १७-४१   |
| बोधगुण का सामान्य संवर्धन और धर्म |         |
| धार्मिक विद्वेष्टता               | ४२-६३   |
| सत्य और धर्म                      | ६६-८३   |
| धर्म का धर्मिण                    | ८३ १०४  |
| धार्मिकों के धर्म, उनकी धर्मिता   |         |
| धर्म धर्म                         | १०६ ११४ |
| धार्मिक धर्म की धर्म रचना की धर्म |         |
| मनुष्य के धर्म धर्म               | ११३ १६० |
| हमारा धर्म धर्म                   | १६१ २२४ |





## पहिला परिच्छेद

### मृत्यु के विरुद्ध मनुष्य का अभियान ।

स्वयं रोने हुए जम्म लेना और फिर, कुछ वर्षों साँस लेकर, अपने स्त्री-सपनों को दस्तार मरजाना— इन दो प्रमुखता से जमरे हुए और प्रत्यक्ष दिख पड़ने वाले मोड़ों के बीच ही मनुष्य की कहानी बिहरात है। वही आत्मीय रीति है। उसकी इस कहानी का विषय होता है। कुछ-कुछ एवं-विषाद लोहाई-ढेप और सहप्रतिष्ठ विग्रह के परस्पर विरोधी सूत्रों से बुंधे हुए कुछ सक्रिय बर्ष ।

हमारी अपनी धीरे-धीरे जमावट में स्थूल और सीमित-शक्ति की ही होती है। संसार में रहते हुए हमारे पासही व्यवहारों को हम निष्ठा का एक बल इतनी हृदि-शक्ति ही हमारी धीरे-धीरे की विरह-प्रकृति में ही है। इस सीमित हृदि-शक्ति के बावजूद बोनो और जो कुछ भी घटनाएँ होती रहती हैं उनको हम हमारी इन धीरे-धीरे से कभी रोक नहीं पाते। इस लिये मनुष्य की कहानी का वह बोझ-सा भाग ही जो कुछ बात के लिये वापिस क्यों में उभर उठता है, हमें दिन-दुन पड़ना है। माता के देह में निरस कर बाहर दुनियाँ में आने का नाम हमने “जन्म” रखा छोड़ा है और कुछ गिने-बुने वर्षों में कुछ गिने-बुने ही साँस लेकर अब व्यक्ति अपना बस तोड़ बैठा है उसे हमने “मृत्यु” की संज्ञा दी है। “जन्म” और “मृत्यु” के बीच के वर्षों की ही हम उस व्यक्ति का जीवन-काल कहते हैं क्योंकि, इन

बोले से बयों के भीतर ही निरन्तर गति करते हुए अघटित घोर इत बारह न दिये पड़ते बाते "क्यान्त-फील्ड" (Quantum fields) परमाणुओं, अणुओं इधर-उधर घोर मुलतली के जमिन् बयों में बिनाश करती हुए मनुष्यों, बसुओं पक्षियों कीड़ों-मकोड़ों, बनस्पतियों पेड़-पौधों, गरियों, लज्जों और पर्वतों के बयों में उभर कर मूल जैतिक आधार पहल करते हैं और फिर उनके पारस्परिक संघात के होते पड़ जाने के कारण उसी पलट कल में बिछर पड़ते हैं। उनके इस बिखराव का नाम ही मृग्य है।

जगम और मृग्य का एक अद्वैत सम्बन्ध है - जो जगम तेना है पराधी मृग्य निश्चय है। मृग्य जितनी निश्चित बातें संसार में दूसरी होती है। जगम नहीं भी हो सकता है। वरन् जगम के अनन्तर मृग्य अनिश्चित है। श्रीमद्भगवत् गुरुरा के अनुसार:- "मृग्यम-जगम और हेतुन गद भावने। अघटितप्रणाली का मृग्य ही प्रातिना प्रकृष्ट। 'हे' और, जगम जैसे जाने प्रातिनी की वही की उत्पत्ति के साथ ही मृग्य भी जगम से तनी है। बाटे जान हो बाटे ही बयों के बाहः- प्रातिनी की मृग्य निश्चय है। मृग्य-जगम और मृग्य के बीच बहुत बड़ा अन्तरा भी नहीं है। बीर की ती तिन प्रकार अघटित की मोह में ही जेननी है। उनी प्रकार मृग्य के गुण में ही बीरम का स्वयम् या हिलता हुआ होना है। दूसरी घननी मोह-रहित की बीरता के कारण ही हम इन बीरों में एक इगु का आनन्द जाने हैं। अनन्त की रिक्ता में ही अनन्त के जीवन का आनन्द होना है। इगु के बिना जीति का अहम् ही नहीं है।

ज्योति है तो प्राना का भी अस्तित्व है। मृत्यु जीवन के साथ साथ बननी है।

बुद्धि की बीनता से हम जीवन के एवमान घंटा को ही जान पाने हैं और उसे ही सर्वानिशापी महत्व देने हैं। तस्वीर के एक ही रंग का ज्ञान होने के कारण हमें मृत्यु में उस सत्य की उपलब्धि नहीं होती जिसे हम जीवन में पाने हैं। इनीतिसे मृत्यु को हम अभिघात कहते हैं और जन्म को बरदान। प्रत्येक नये जन्म पर हम शुचिर्षा मनाने हैं परन्तु प्रत्येक मृत्यु हमें दुःख और घोर से भर जाती है। एक (जन्म) हमें 'हुआ गया' लारर देता है तो दूसरी (मृत्यु) हमसे 'हुआ हुआ' छीन ले जाती है। इस 'छीन ले जाने' के कारण ही मनुष्य सदा मृत्यु से नय प्राना बना प्राना है।

ब्रिज घटना या बानु से वह भय प्राना है। उससे बचने या उसको डालने का मनुष्य निरन्तर प्रयास करना रहा है। यह मनुष्य का एक मौलिक स्वभाव है। सानों बर्ष पहिले जब पुष्पी पर मनुष्य का सर्व प्रथम प्राबुबीय हुआ था तभी अचानक किसी एक दिन उसका मृत्यु से सातप्रकार हुआ था। उसके बाद प्राये दिन उसने मृत्यु के घटव नियम छोड़े हाथों को अपने मने-बबजनों और बान-बड़ोमियों को अपने से दूर लिये जाते हुए देखा है। इस मृत्यु को किसी प्रकार डाल कर उन पर विजय बाकर अवर हो जाने की दुःख्य लागना है हमेशा ही मनुष्य के अन्तर्बन को आनोदिन लिये रहता है। सानों बर्ष पुराने मनुष्य के इतिहास के प्रत्येक करण में अनेकों ऐसे घुड़ विचारों सानों और महामाओं की जगह दिया है जिन्होंने साने घाने दुर्षों में मृत्यु की हम मनाबह बहेमों को मुनवाने एवं



आपके दुनिवार से रिक्त पड़ने वाले पाश से समुची समुप्य आति की मुक्त करने के साधनों को रोज पाने के प्रयास किये हैं। उनके इन प्रयासों में ही धर्म, धर्म और विज्ञान की बिबेली को, उनकी अनेक साधनों और प्रशासनों के साथ, अस्मृत और प्रवाहित किया है।

मुद्रा प्रतीत की हजारों वर्ष पुरानी पत्तों के समस्तान की भिन्न-भिन्न सुप्रतिष्ठ होने वाला वैदिक युग का एक संत आदि की मुद्रा में समस्त साधनों का नाम की कदम पुरान की यों मुद्रित करने हुए हमें गुन बढ़ता है "अस्तोमा गुरुमयः समस्तोमा अतीतिमयः अनीमा अमुनमयः" ( मुझे आत्मा से सन् की ओर से आती; संसार से आलोके की ओर से आती; अन्तु से अन्तु की ओर से आती )। वैदिक आदि की यह कदम प्रार्थना ही भी साधनात्मक और साधनात्मक समुप्य आति की साधनात्मक इन्द्र की प्रतीक है समुप्य-आदि का नाम है; उसके जीवन का दिग्ग-वर्णन है और उनके जीवन का एकमात्र विचार है।

मुद्रा पर विचार करने पर हमें ही जाने की इत साधनात्मक नामकी अजिनावा की पुन के साथ या आदि सोच जाने के निम्न वैदिक युग के अनेक आदियों और विचारकों में प्रयास तो अनेक ही किये हैं। मुद्रा अन्तु के पुरान युग के एक आदि साधनात्मक में तो अनी होकर हुए विज्ञान के साथ यह कहा जा—

देवदेवमनुष्यमन्त्रात्मकविज्ञानमयः अस्मत् ।

सदेव विज्ञानमनुष्यमन्त्रात्मकविज्ञानमयः ॥

"आत्मा है मैं उन अन्तु युग की दिग्ग-वर्णन के साथ है और जो अन्तु से बड़े, अन्तु से बड़े है। उनको आदित्य ही

(मनुष्य) मृत्यु के बार का सपना है। प्रत्यक्ष ही घोर घोर बड़ाने का घोर कोई नार्थ ही नहीं है।”

आये चलकर अविद्या-बाल में हुए अविद्या-मार्ग-मार्ग की मृत्यु के देवता यन्त्र से हठपूर्वक मृत्यु के स्वर्ग घोर मनुष्यों पर प्रकाश बालने के लिये वह पुण्ये हुए देवते हैं—

“देवप्रते विविदिता मनुष्ये

अस्तीत्येके नायमस्तीतिवाप्ये ॥”

“मनुष्य के मरने पर उसके विषय में जो यह शास्त्रात्मक माने उठाई जाती है— कुछ विचारक कहते हैं कि उस मृत मनुष्य का अन्तरी मृत्यु के बाद भी अस्तित्व रहना है और कुछ लोग कहते हैं कि नहीं रहता। याद इस विचारदायक बात की मुक्तक कर मुझे बनताहूँ।

प्रत्यक्ष में मनुष्य के मरने के बाद अतीतिर्यक्त आत्मा के रूप में उसके अस्तित्व की स्वीकार करते हुए उस मनुष्य के अन्तर होत्रा के लिये अन्तरात्मक विद्या-विषय की भी बननाया बा—

अन्तर्गत च हृदयप्रकाश—

—रमातामृतीमविनि श्रुति।

ततोऽर्जुनायप्रमुखायेति

विचक्ष्म्या अकाले भवति ॥

‘हृदय की एक ही एक नाड़ी है। उनमें एक नाड़ी मृत्यु की भरकर बाहर निकली हुई है। मृत्यु मरण को मनुष्य उस नाड़ी के अन्तरी आत्मा की सांगुल कर ऊपर जातक की घोर होकर आत्मा-विचक्षण करता है वह ‘मनुष्य की वाता है। अन्तरी अन्तरी मृत्यु की होकर आत्मा विचक्षण करने वाले आत्मा की फिर इस

गतिार में ही लोह घाना बढ़ता है ।” अपना अंतिम निधेय होते हुए धर्मराज ने अचिन्ता की बातलाया कि “जन्म धीर मृत्यु केवल कल्पना है बिना ज्योतिरवस्थाप ब्रह्म ही एकमात्र सत्य है ।”

बृहदारण्यक उपनिषद् ने मृत्यु धीर “अमृत” (अमरता) के स्वरूप को बतलाने हुए कहा है - “मृत्युर्बेतमः ज्योतिरमृतम् ।” अमरता ही मृत्यु है धीर ज्योति अथवा प्रकाश ही अमृत है । एक सत्य उपनिषद्द्वारा ने कहा है - “परज्योतिर्कर्म तस्यैव स्वेन ज्योतिर-निमित्तरूपेण” अर्थात् प्रत्येक प्राणी अपनी मृत्यु के बाद वरम ज्योति में परिवर्तित होकर अपने मूल-स्वरूप में प्रतिष्ठित हो जाता है । अमरत्व का विशेषण करने हुए अमृतीता कहनी है—

“एवो यन्नोनास्ति ततोऽस्तितीये यो ह्यस्यैव त्वमहममृतं ब्रवीमि” अर्थात्, उक्त वरम ज्योति से अपना दुगारा कोई कुछ व्यतिरिक्त नहीं है— प्रत्येक प्राणी (धीर अमराली भी, ज्योति इन् में कोई तत्त्विक भौतिक भेद नहीं है जैसा हम धार्य कल्पताथे ) के हृदय में प्रकाश मान उक्त ज्योति को ही मैं ‘अमृतत्व’ कहताहूँ ।

एक उपनिषद्द्वारा ने “अविद्या मृत्युर्गोचरी विद्यामृतमामृतम्” (अविद्या से मृत्यु को बार बार विद्या से ‘अमृत’ को माना है) कहा है तो दुगारा अविद्या कहना है - गितागिने लखे धर्म लक्ष्मणे तब मृत्ता को विद्युन्मयाने । वेई लक्ष विमर्शनि धीराने जमाने अमृत-वस्तु-ज्योति- “अर्थात् निम्न (मृत्ता) धीर अमृत (अमृत) मानक हो लखेई बर्ता एक दुगरी में विमर्श लक्ष्मण बननी है बर्ता अपने धीर का ध्यान करने करने धीर पुरत ध्यान धारणा में ऊपर ऊपर अमृतत्व प्राप्त करने है ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि ईरिद-वात की पूरी सम्पत्ति अन्धवि  
में अनेक विचारक ज्ञाति मृत्यु के एवं मृत्यु की ओत कर घमर हो  
जाने के सनातन प्रार्यों पर दम्भीरता से विचार कर रहे थे ।

महाभारत-काल तक जाने जाने ली यह विचार इतने परिपक्व  
हो गई थे कि तत्कालीन एक ज्ञाति सन-मुञ्जान मृत्यु की अपारम्भता  
और अन्धविचारिता की ओ कुम्भीनी देने लगी थे । उक्त ज्ञाति के मन  
की व्यक्त करते हुए बिहुर ने कहा था—

अनराध कुमारो वै यं पुरातनं सनातनम् ।

सनमुञ्जानं प्रोवाच ऋतुर्नास्तीति मारुतम् ॥

—उद्योग बर्ष पृ० ४१ इन्द्रो० २

“हे अनराध ! अनीध पुराने और चिर-जीवी सनमुञ्जान कहते  
थे कि ‘मृत्यु’ है ही नहीं ।”

सनमुञ्जान के इस मृत्यु-वर्जन की पूरी तरह समझ जाने के निम्ने  
अनराध के घाव करने पर बिहुर ने ज्ञाति सनमुञ्जान की स्मरण  
कर वहाँ बुलाया । उनका स्वागत सकार करने के बाद अनराध ने  
उन्को बुद्धि—

सनमुञ्जानं परिहं पुरोमिमं मृत्युरस्तीति तव प्रचारम् ।

देवानुराष्ट्रावरम् ब्रह्मचरमदृग्मेवे तन् वतरन्मु तामम् ॥

—म० भा० पृ० ४२ इन्द्रो० २

“हे सनमुञ्जान ! मैं तुम्हा है कि आपका यह मित्राण है कि ‘मृत्यु’  
नहीं होनी है । उधर मैं समझ यह भी तुम्हा और कहा है कि मृत्यु  
होनी ली है वरन् उन्को जीव पर प्रचार होने के निम्ने पुराने समय  
में देवी और पुरुषों ने ब्रह्मचर्य का व्रतन किया था— यह प्रत्य हो

बतलाइये कि हममें भीम बात साय है ।

तबानुमान में उत्तर दिया:—

उमे साये शक्तिमत्तपविष्टि मोहान्मृगु सभ्यतोऽर्थवीमापु ।

प्रपादं चे मृत्युमहम्भवीमि तथाप्रमादममृगु(चंद्रवीमि) ॥

—बही श्लोक ४

“हे शक्ति ! यह बीमों ही बातें लय हैं । सभी बिडान् सहमन हैं कि मोह से प्राली की मृगु होती है । मैं भी प्रपाद का ही मृगु का कारण बतलाता हूँ और, इस प्रपाद, अत्रपाद को ‘अभुताव’ बतलता हूँ ।”

आगे बतलकर उगृनि मृगु के कारणों और उस मृगु से पुढेवाता पाकर अमर हो जाने के उपायों का बिना विवेचन कर यही निष्कर्ष रक्ता था कि यदि अनृत्य प्रपाद और अलाय त्वाव कर अहर्च्य का बालन करता हुआ संयमबुद्धि अधन-आयन करे तो वह कभी नहीं मरेगा । अति में भी एक अपह मही कहा है कि अहर्च्य बालन करने वाले को ‘न ताय रोमो न अता न मृगु’ न तो कोई रोम ही होता है न कभी बुझाया जाना है और न कभी अतची मृगु ही होती है ।

भारत के हम महाभवीवी और अस्त-वर्तों अति के हम मन से बिलना बुझना-ता मन ही प्रतिष्ठ रत्तायन-वारावी डा० तापमन बीनिङ्ग (Dr. Linus Pauling) का भी है । डा० बीनिङ्ग को रत्तायन-वारावी की अतीव अमलनियों की सोचों के सम्मान में राष्ट्र प्रतिष्ठ अतिष्ठ पुरस्कार भी मिल चुका है । डा० बीनिङ्ग ने १९ बाररी स० १९६० ई० के दिन अमेरिका के एक सहर सॉन एम्प्रेन

(los Ang 15) में कहा था- "Theoretically man is quite immortal His bodily tissues replace themselves He is a self repairing machine and yet he gets old and reasons for this are still a mystery" यर्बाव एक विद्वान्त के मन में मनुष्य अमर है। उसके शरीर के तन्तु विरगार अपनी मरम्मत करते रहते हैं। वह एक स्वयं जातिन मरम्मत मशीन है फिर भी वह बूढ़ा हो जाता है और मर भी जाता है। इस प्रकार उसका बूढ़ा हो जाने और मर जाने के कारण अभी तक एक रहस्य ही बने हुए हैं।

आने बलकर डा० पीनिङ्ग ने कुछ कारणों पर प्रकाश डालने हुए कहा- One of the reasons for man's ageing was that he was constantly inflicting brutal 'insults' which it was not supposed to receive. The result of these Constant recurrent insults is ageing and death. As an example of these insults let me point out the smoking of cigarettes One packet of Cigarettes per day shortened life by one-fifth

यर्बाव; मनुष्य के बूढ़ा होने का एक कारण हो यह है कि वह अपने शरीर पर लगातार कुछ ऐसे घरेलू 'घमाचार' करता रहता है जिससे लहने के लिये उसका शरीर बनाया ही नहीं गया है। लगातार बार-बार दिने लगे इन घमाचारों का परिणाम होता है बूढ़ापन और मृत्यु। इन घमाचारों के एक उदाहरण है मन में

तिपटेद पीने की नींव को पैदा करता है। प्रतिदिन दिया हुआ बिस्तर वा एक वीरेड पोने बांस के बीजन-बाल को उसके बांसों नाम से कम कर देता है।

अमेरिका के एक शहर कंटीकोनिया में स्थित "इन्स्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी" (The Institute of Technology) के बिस्ते बसे प्रयोगों और प्रयोगों को आधार बनाकर ही का० नीतिन में अपना बहुत निष्कर्ष निकाला था।

भारतीय इतिहास के अति बाल में एपुनि-सर्गों का प्रत्यक्ष दिया गया था उस समय के एक महान् विचारक और विधि-शास्त्री राजाजी मनु ने भी मृत्यु क्यों होती है? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए अविर्गों की मृत्यु के बाद अनुस्र वारण बनाया है। मनु के अनुसार "अमर्यादेन वैशामाचार एवम वर्जनात्। आत्मधारण दोषाच्च मृत्युविशामिज्जयति"— वैशों को न बचना, लघाचार की विधियों का तिरस्कार आत्मरय और प्रचार के बल हो जाना और अन्न दोष (भोजन में अलंघन)— यह कार वारण ही अनुस्र को मृत्यु के मुख में पकने देने हैं।

हर्षण सर्गों की तो नींव है। मृत्यु और उतने पुत्रवत्ता काकर अमर हो जाने की भावनी अविश-वादी कर ही रखी हुई है। इन सर्गों के अहोना अविर्गों ने अपने अपने युगों में इस अनात्म विरह प्रश्न को अपने अपने अर्थों और भागविक उत्तर की ओर-दृष्टि में उनके दरबारों को बरकरारने हुए लड़ा पाया था। अन्तरी अनीविक प्रिया, अन्तर्गत ज्ञान-साधना और दीर्घकालीन अनुभूतियों के बल पर इन अविर्गों ने अन्त और मृत्यु के अन्तर्गत से निकल कर अन्तर्गत

मृत्यु का जाने के विभिन्न साधनों की प्रतिष्ठा की थी। यह बात तो प्रायः सभी वर्धन-वार मान कर लेते थे कि अगम लेने के बाद मृत्यु अनिवार्य है—उसे कोई भी नहीं टाल सकता। परन्तु उनके द्वारा जनतासे यह साधनों को अपने जीवन-काल में अपनाएँ और उन पर व्यवहार करने से अनुम्य मृत्यु का जाता है—न तो उसका खिर खम ही होता है और, इस कारण न मृत्यु ही होती है।

शांति-शास्त्रों के प्रायः सभी पुरातन ऋषियों और आचार्यों ने जहाँ अनुम्य के भौतिक स्तरों की कल्पना विस्तारित मृत्यु में ही मानी है और जीवन-काल में मृत्यु-साधन के लिये विद्ये द्ये साधनों का उस मृत्यु के अपराध ही माना है वहीं कुछ मध्ययुगीन सत्यों, भाषों और पौर्विकों की एक स्पष्ट समीक्षा और अपूर्ण वाली हूँ एक समीक्षा और सम्य-सम्य बात कहती हुई सुनाई पड़ती है। इन तीनों का यह बात या हि बात तरह के एक अनि-रासायनिक संयोग है हम इस अनुभव है कि जो भी अन्तर अन्तर बना सकते हैं। सांख्यिक अनुम्य में हमें साधनों का संशोधन मत कहते हैं। प्रायः किसी एक विधिसे ही हम इस पर प्रकाश डालते हैं।

समय आया है और कई बहिन हिमालय की तराई में बसे हुए आचार्य महा-सम्य की राजधानी विपिनवासु में राजकुमार निधार्थ ने एक दिन मकर-सप्तमी पर कुछ लोगों को अपने शत्रुओं पर एक मृत्यु के घट की से जाने हुए देखा था। इन शत्रुओं को देखते ही निधार्थ के मन की अनेक प्रतीति में आधुनिक बन गया था। इन अनुम्य को जो बोली देर कहते तक जनता, विप्लव, मोक्षता और अन्य वेदार्थ कर रहा था, अचानक क्या होगा? अब लोगों ने उन्हें अपनाया कि





भौतिक शरीर मृत्यु के तुरन्ती पञ्जों में बबकड़ चूर चूर होजाय और उसे वह रोद्र भी नहीं सहता— उसके अपने जीवन-काल में उसके शरीर को जो नाम दिया गया था और जिस नाम से उसने संसार में जाकर कुछ काम किया था उस नाम के आधार पर ही वह चकर खा रहा है। इसी उद्देश्य को लेकर उसने अपने-अपने विजय-यात्रा की और उन विजयों की स्तुति को स्थायी बनाने रखने के लिए उसने अपने उस नाम को ईद-पत्थर और चूने में बाँध कर बाह्य बाह्य विजय-स्तम्भ, स्तूप और विभालकाय विराजित करे दिये— महाकाय के निर पर बैर रखकर उसने अपने नाम पर सम्पूर्ण जगत्में महा-बाध्यों की रचना कर उसने अपने अस्तित्व की छायाँ और छायाँ के मयूर और स्थायी चूर्णों में गुँथा— कूट, धर्म-माताएँ और मन्दिर बनवाये और लाख-बहुन जैसे पावनदार और कन्या-मूर्तियों का निर्माण करवाया। जगत्में वहाँ की गुच्छाओं में पुतल बन दीनी और हथौड़े के बल पर बाहरों के स्तम्भ दिनों पर अपनी हल्की की छोड़ा। भौतिक देह की अनेकता कुछ अधिक बड़े काण्डों में घँसित उसके इन “अन्य शरीरों” को मृत्यु के अनुचर महाकाय ने कुछ बोझी अधिक छूट तो अबाध ही रही। बरन्तु मानवी नियमों को अथवा समय पर निराने रहने के अपने अर्थार्थ और अतुष्ट अधिकार को ही यदि हम चुनौतियों को वह अधिक दिनों तक न सह सके। “धीरे धीरे एक क्षण में वहाँ कुछ भी नहीं” का नारा बुलन्द करते हुए उठने हम जवरी समय समय पर एक ही बार में निरा जगत्। कुछ बिन्दुओं को वह अपनी जगत् पर धात्र भी छोड़े हुए हैं। बरन्तु अब भी मैं मानेगा तब ही उसकी मृत में पिता कर

रत देया : लुटि के भेड़तम आखी बहे जाने जाने बुझिछीत मानव की यह कौत्ती बिडम्बना है ।

तो क्या धूलु घोर कात के सामने मानव हमेशा ही हार पर हार सता रहेगा ? महाकाव्य के लम्बे लीढ़े पैमाने पर एक घायल युव और नगण्य सा बिगुल बना हुआ घसरा व्यथित और जीवन प्रतिष्ठा बना करी अपने घायलों के लाकर उस पैमाने के अन्तिम छोर को घालता नही कर लेता ? बिद्वाने हजारों हजार वर्षों से उसरी रघुल बर्णित देह का प्रत्येक बरत समर हो जाने की एक अचमोदित धूल से घायल पड़ा बता दिया है - क्या उसकी वह धूल सर्वथा अचरहीन और निराकार तो नहीं है ? हम सब और ऐसे ही मिलते जुलते अनेक बुरक प्रदों की एक बीज सी हथड़ी कर घाब फिर नए विरक्तम विरक्त-प्रान मृत्यु की ओतपर समर होजाने का प्रान हमारे दरवाजों को बरबसले बना दिया है - इस आशा में कि सामर घाय हम हमारे लीं बड़े वैज्ञानिक-ज्ञान के समर पर घसरा एक अक्षित हात पोज लगे : घाय हमने हमारे अगनि-वच पर बनने जानते एक नई बीड़ लेभी है जहाँ बाहर हमने अपने अपने अनेके अगनि-वच की बिदाय को समर कर बिनामचो महाकाव्य जिन की सामने सदा कर निजा है : अपने हाथों की ओड़कर हमारी सेवा करने की मुरा में कड़ा हुआ यह जिन हमारी लकी इन्दाओं और अगिनाचों की बुझ करने की लपर है । अन्दा हीगा कि मृत्यु और अमराव के इस ललायन दुःसाध्य प्रान को घाय हम इस अगुण्य अक्षि-आली जिन में हो बुझे :

बिद्वाने बिदायों, धनों और अगम के अपने बुझे की अने

साम्योन्मेषक प्रकट से भेदकर साम्य के वास्तविक स्वरूप की भूलतः देने वाली विज्ञान की धातुनिष्ठतम उपलब्धियों से इस विरलतम प्रश्न की भीमका माँग के पहिले एक मन्दर में यह देख लेना जरूरी होगा कि अमर हो जाने की यह समानन भूल किसी दोस भाषा पर खड़ी है या नहीं। निश्चय ही; यह एक खोजती और अकारण समक सी नहीं है। यदि ऐसा होता तो हजारों वर्षों में समानार अस्तकता की बार बार टोकें या टाकर यह कमी की पान हो चुकी होती। तिरके एक मही बात कि बीने हुए प्रत्येक पुन में हजारों विभिन्न ज्ञानियों, विगठनों और समों ने मनुष्य की अमर बनाने के कार्य की खोज निकालने की ही अपने जीवन का धर्म ध्येय बनाया था, और जो ध्येय आज भी वैज्ञानिक-मान-मत में बड़े बड़े हमारे वर्तमान पुन के उत्तुह विचारकों की नींद हराव दिये हुए हैं— केवल मही एक बात इसके साम्य पर आधारित होने की पुष्टि करती है।

वैज्ञानिक जगत् में और दर्शन-जगत् की लम्बी परम्परा के वर्तमान बाह्य विज्ञान-जगत् में, 'साम्य-कारण सम्बन्ध' का सिद्धान्त सर्वमान्य रहना जना आया है। कार्य करने कारण के समुच्चय [१] होता है; कारण के समान विभिन्न गुण-धर्म कार्य में उभर आने हैं जने ही वह उत्तर बिखरे हुए वर्षों में। कार्य के गुण-धर्मों को देख कर उसके ज्ञान कारण के कर और गुण धर्म का अनुमान लगाया जा सकता है। हमारे मन, प्राण और शरीर में— यही नहीं हमारे शरीर के चरक प्रत्येक कर में— अमर हो जाने की एक कुंमल साम्यता, एक अननुमी व्याप्त बनी हुई है जो हमें इन रिक्त में

निरन्तर प्रयास करते रहने को उद्यत्ताही कहती है। हम अपने प्रतिरूप के बिपरीत रहना चाहते हैं।

धमर होकाने और हमेशा बने रहने की हमारी यह प्राणुत आकांक्षा ही हमारे शारीरिक अस्तित्व के एक धमर स्रोत की ओर स्पष्ट संकेत करती है। हमारी इस आकांक्षा का निर्वह एक ही धर्म है और वह यह कि जिस मूल वस्तुवादी के हमारे शरीर में हुए हैं वह स्वयं किर-रक्षाही और अविनाशक हैं। हमारे व्यक्तिगत धरोहरों के निर्माण-कारी घटक होते हुए वह हमेशा अपने मूल-स्वरूप में ही प्रतिष्ठित रहना चाहते हैं। अपनी यह प्राणुतता ही एक सामूहिक रूप में हमारी धमनी प्राणुतता है।

स्पष्ट ही धमर ही बाने की दुकानों में आकांक्षा मनुष्य और प्राणविक है हमारे अपने शरीरों में ही व्यक्तित्व है। इसके मौलिक स्तर की पूरी ओर पर लयबद्ध के निवे हों वह हमें अपने शरीरों की मौलिक वनादत का एक दुःख और लल-रूपों सम्भव बनना होगा। प्राणुनिक विज्ञान की उन्नतियों के प्रभाव में हमारी मौलिक हेतु का एक सर्वोच्चनी तात्त्विक बिन्दुबद्ध बनने पर ही हम उगाहो बनाने बाने मूल वस्तुवादी के स्वरूपों और मूल-वर्गों को प्राप्त करने और इस आकांक्षा के लक्ष्य पर ही हम अन्तः के प्रवृत्त स्वरूप को ही मौल-व्यक्त कर सकते हैं।



## दूसरा परिच्छेद

### हमारे शरीर की रचना

हमारे अपने शरीरों की बाहरी रूप रेखाओं उनके व्यवहार संयन्त्रों और आचार-विचारों से हम सब यही भाँति परिचित हैं। छोटी से लेकर बड़ी तक। हमारे सब के शरीर अपनी बनावटों में एक जैसे ही होते हैं। जम्माई, मोटाई, घबका किसी एक यास घन के मूलाधार होने के कारण उनमें परस्पर जो कुछ भी दिखावटी फर्क होते हैं वह केवल हमारे शरीरों के व्यक्तियों प्रकृति-बलों के रूप या स्थिति होने के कारण अथवा किसी बीमारी या बीटों के कारण उनमें से किसी एक या अधिक के अनेकाने के कारण ही होते हैं।

हमारे शरीरों के हाँके मुख्यतः हाड और मांस के ही बने होते हैं जिसको एक दूसरे से जोड़ती हुई कुछ यमनियाँ अथवा नाड़ियाँ होती हैं जो अपने भीतर रक्त का सञ्चालन करती हुई सम्पूर्ण शरीर को बुद्धि और बुद्धि देनी रहती हैं।

हमारे व्यक्तिगत शरीर सब-बानिन, मुख्यतः शरीर और आत्म-निर्भर होने हैं। हमारे शरीरों के ऊपरी भागों में, नेत्रों और खोंपड़ी की हड्डियों में मुरलिन, भरिभक्त होने हैं जो अपने आरम्भ अवस्था में केवल सञ्चालन शरीर के समस्त विद्या-बलाओं का सञ्चालन करती हैं। जिसी बँके पर बना करना चाहिए इस प्रकार

हम जीवन खाता है और १२००० गीतन वाली या अन्य इस प्रकार जीता है। इस जीवन और साथ से ही उक्त अणु तत्त्व समाता अपनी यहूकर शरीर की समस्त केशिकाओं को भरता देती रहती है।

हमारे शरीर कुछ कुछ अणुओं के संयोग से बने होते हैं जिन्हें कोषाणु (cells) कहते हैं। अब केवल हम मनुष्यों के ही अणु तत्त्व अणुओं के शरीर एक मात्र कोषाणुओं के ही बने हुए हैं। इन कोषाणुओं के आधार पर (1) अणुओं की दो वर्गों में बांटा गया है— एककोषाणुकारी (unicellular) और बहुकोषाणुकारी (multicellular)। वहीं वर्ग के अणु हैं। अमीबा (amoeba) और ऐल्गी (algae) इत्यादि और दूसरे वर्ग के अणु हैं मनुष्य और अन्य प्राणिम जीव।

मनुष्य के शरीर को बनाते वाले कोषाणुओं का आकार १-२ इंच से लेकर १-२ इंच तक होता है। अणु कोषाणु में कोष-तार (protoplasm), केंद्रक (nucleus) और आसर्पक अणु एवं आसर्पक बिन्दु (centrosome and centriole) होते हैं।

कोष-तार (protoplasm)— अणु कोषाणु का वह एक अणु तत्त्व होता है जो वह तत्त्व कोषाणु में भरता रहता है। यह एक अणु तत्त्व (एक और इस के बीच के रूप का) बिन्दु बना रहता है। अणु तत्त्वों के अणु तत्त्व इसी प्रकार में अणु तत्त्व होता रहता है। यह सभी अणु तत्त्व सभी अणु तत्त्व, सभी अणु तत्त्व (अणुओं के रूप में) और सभी अणु तत्त्व दिखाई देता है। इसके दो अणु तत्त्व हैं अणु तत्त्व और अणु तत्त्व। अणु तत्त्व कोषाणुओं में इन दोनों अणुओं के अणु तत्त्व में भरता है।

प्रत्येक कोषाणुओं में स्वयंभूत शक्ति प्रचलित होता है और आन्तरिक सार बहुत कम। ज्यों ज्यों कोषाणुओं के आकार में वृद्धि होती जाती है त्यों त्यों आन्तरिक की मात्रा बढ़ती जाती है और स्वयंभूत की मात्रा उन्नी अनुपात में कम होती जाती है।

कोष-सार जीवन का धूल सत्व है। उसके जीवन और सक्रिय रहने पर ही शरीर में जीवन के जलसंचयन होते हैं। उसके निर्वीर्य हो जाने पर शरीर का जीवन भी नष्ट हो जाता है।

### केन्द्रक Nucleus

यह कोष या कणिकाकार होता है और जहाँ कोषाणु के जीवन में पाया जाता है। यह जलित सत्व (proteins) बहुत बराबरी से बना होता है। इसके मुख्य पदार्थ का नाम न्यूक्लीन है। इसमें आकारण से कोरपोरल का माप अधिक होता है। कभी कभी लोह भी पाया जाता है।

कोषाणु के कोरपोरल और फिर उसके विभाजन का काम यह केन्द्रक ही करता है। यदि किसी एक कोषाणु में उसके केन्द्रक को दृष्ट कर दिया जाय तो उस कोषाणु की मृत्यु हो ही जाती है।

### आकर्षण क्षेत्र Air-raction sphere

यह कोषाणुओं के विभाजन में प्राथमिक अंश देता है। यह कोषाणुओं की कर्बोनात्मक का क्षेत्र होता है।

### तन्तु या पेनोजाल Tissues

एक जैसे प्रकार के एक एक ही जिग करने वाले कोषाणु एक घात में मिलकर शरीर के अंगों को बनाते हैं तब उनके इस समुदाय को तन्तु या पेनोजाल कहते हैं। यह तन्तु उन कोषाणुओं



की एक या अधिक बलियों से बने होते हैं। एक प्रकार के तन्तु ऐसे होते हैं जिन्हें संयोजक तन्तु (Connective tissues) कहते हैं। यह तन्तु ही शरीर के विभिन्न तन्तुओं और सबके भागों को एक दूसरे से जोड़ते हैं। शरीर में अन्य तन्तुओं की अपेक्षा यह तीन तरह के होते हैं—

(१) तंतुज तन्तु (Fibrous tissues.)

(२) तद्व्याप्त (Cartilage.)

(३) हडि (Bones.)

इस विभागों के मत से सब भी संयोजक तन्तुओं के ही संतर्पन जाता है।

तंतुज तन्तुओं के ४ भेदों में एक तद्व्याप्त (areolar tissue) होते हैं। यह विस्फोटक (elastic) होते हैं और इनका एक गुण यह भी होता है कि वे अपने आकार को रूपांतर कर सकें। शरीर के विभिन्न भागों को बराबर यही जोड़ते हैं। शरीर के किसी किसी भाग में यह तन्तु बना कोशिकाओं से युक्त होते हैं। यह उन्हें बना युक्त तन्तु (adipose tissues) कहते हैं। इस तन्तुओं में बराबर बड़ा बड़ा बराबर शरीरवासी प्राणी के जीवन-काल में तरल बन जाते हैं। इस प्राणी के मरने के बाद यह जल जाता है। अतिसूक्ष्म की भाँति में बना की भाँति अधिक होती है।

### तद्व्याप्त Cartilage

इसमें सब का संभार नहीं होता। यह कठिन और विस्फोटक (elastic) होती है। इनका कोई भी एक दुर्गुण देखने में आसानी से लीज के अत्यंत मोटावा निचे हुए मटेर और नहीं नहीं

धीमा दिगताई देता है। मरुदावरता में शरीर का बँटवण तदनु-  
स्थितियों का ही बना होता है जो कम्पा- अस्थि में बसित हो जाती  
है।

### अस्थि Bone

यह अस्थि शरीर का हिस्सा है, जिसमें कुछ विविध-व्यवस्था  
(elasticity) की होती है। इसके नीचे रखा जा रहा है शरीर  
इसके बोझ के लिये एक नमिषार्थ की होती है। इसका रंग गहरा  
की शरीर तो लंबे होता है जिसमें नीचे शरीर पुनर्वादी रंग की आभा  
मिली रहती है। बाइने पर यह नीचे से चढ़ती लात दिगताई देती  
है। इनको बाइनेर कुछ-बाइनेर बाइनेर से देनसे पर इसके दो भाग  
रहा दिग चढ़ते हैं। एक भाग की रचना लघन होती है उसे लघन  
भाग (Compact layer) कहते हैं। दूसरी की रचना कुछ विविध  
शरीर लघन होती है उसे लघन भाग (spongy layer) कहते हैं।  
लघन भाग गहरा की शरीर एक लघन भाग नीचे की शरीर होता है।

मनुष्य के शरीर का बँटवण अस्थि (Cartilage शरीर)  
अस्थि (bones) का ही बना होता है। अस्थि कि एक ऊपर मिल पाते  
हैं इन्हें लघन लघु का ऊपर (issues) है। इन के ऊपर का  
२०% जाती होता है। शरीर का भी दिगताई एक लघन लघन का  
अस्थि लघन है या है शरीर एक दिगताई लघन लघन का लघन लघन  
होता है।

लघन लघन का लघन लघन के ऊपर ही अस्थि में विविध  
व्यवस्था (elasticity) होती है शरीर लघन लघन का लघन लघन  
लघन के ऊपर इनमें लघन शरीर लघन होती है। लघन लघन

की एक या अधिक बलियों से बने होते हैं। एक प्रकार के तन्तु ऐसे होते हैं जिन्हें संयोजक तन्तु (Connective tissues) कहते हैं। यह तन्तु ही शरीर के विभिन्न तन्तुओं और उनके भागों को एक दूसरे से जोड़ते हैं। शरीर में अन्य तन्तुओं की अपेक्षा यह तीन तरह के होते हैं—

- (१) शैथिल्य तन्तु (Fibrous tissues.)
- (२) तन्तुशालि (Cartilage)
- (३) हड्डी (Bones.)

कुछ बिहानों के मत से रक्त भी संयोजक तन्तुओं के ही संतर्कित होता है।

शैथिल्य तन्तुओं के ४ जेरी में एक सफरित (areolar tissues) होते हैं। यह स्थिति-स्वायत्त (elastic) होते हैं और इनका एक गुण यह भी होता है कि ये अपनी आकार को स्थिर कर सकें। शरीर के विभिन्न भागों को बरतकर यही जोड़ती हैं। शरीर के किसी किसी भाग में यह तन्तु बड़ा कोबाद्यों से ब्रुत होते हैं। तब उन्हें चर्मा पुत तन्तु (adipose tissues) कहते हैं। इस तन्तुओं में बरा हुआ यह बड़ा बर्तार शरीरवारी जाली के जीवन-काल में तरल रूप में रहता है। जब जाली के बरजाने पर यह कम जाता है। शैथिल्य की बजा में चर्मा की मात्रा अधिक होती है।

### तन्तुशालि Cartilage

इसमें रक्त का संचार नहीं होता। यह कठिन और स्थिति-स्वायत्त (elastic) होती है। इसका कोई भी एक टुकड़ा किसी भी प्रकारकी चीज के समान नीलिया लिये हुए लकड़ और नहीं नहीं

पोता बिचलाई देता है। भ्रूणावस्था में शरीर का कजाल तबला-स्थियों का ही बना होता है जो कजाल अस्थि में परिवर्तित हो जाती है।

## अस्थि Bone

यह कठिन और दृढ़ होती है, किन्तु इसमें कुछ लोचन-स्वापन्नता (elasticity) भी होती है। इसके भीतर रज्जा धरी रहती है और इसके पोषण के लिये रक्त नलिकाएँ भी होती हैं। इसका रंग बाहर की ओर तो सफेद होता है जिसमें नीले और गुलाबी रंग की धारा मिली रहती है। बढने पर यह भीतर से बाहरी जाल बिछाई देती है। इसकी कजालर सुन्न-बसक धरा से बढने पर इसके दो भाग स्पष्ट दिख सकते हैं। एक भाग की रचना लघन होती है उसे संघन भाग (Compact layer) कहते हैं। दूसरे की रचना कुछ बिच्छिर और लच्छिर होती है उसे सुविर भाग (spongy layer) कहते हैं। संघन भाग बाहर की ओर एवं सुविर भाग भीतर की ओर होता है।

मनुष्य के शरीर का कजाल कपास्थि (Cartilage और) अस्थि (bones) का ही बना होता है। बता कि हम ऊपर लिख पाये हैं हड्डियाँ तभी तो तन्तु या ऊतक (tissues) हैं। इन के भार का २०% धनी होता है। रीढ़ का भी तिहाई भाग कठिन तन्तु या कार्बनिक पदार्थ होता है और एक तिहाई कार्बनिक या कार्बन पदार्थ होता है।

कार्बनिक या कार्बन पदार्थ के कारण ही अस्थि में लोचन-स्वापन्नता (elasticity) होती है और कठिन तन्तुओं या कार्बनिक पदार्थ के कारण उसमें कठिन और दृढ़ता होती है। कार्बनिक

पदार्थ में एक प्रकार के प्रोटीन ज्ञात होते हैं जिन्हें कोलॉजिन तन्तु कहते हैं। यमिक सबलों या धर्मेन्द्रिक पदार्थ में कल्शियम (Calcium) के फॉस्फेट, क्लोराइड, क्लोराइड और कार्बोनेट भरपूर होते हैं। कुछ मैग्नीशियम के लक्षण भी होते हैं। हमारे अंदर में मिलने वाले सेल्लुलोज का धर्मिकोय भाग हड्डियों में ही मिलता है। चर्बि के पचने के बाद, पेशियों के संकुचन तथा हृदय की चक्कन के लिये भी सेल्लुलोज की आवश्यकता होती है।

कुछ भागों को छोड़कर सारी अस्थि धर्मिकावरक कला (Periosteum) से ढँकी रहती है। इसके दो स्तर होते हैं जो परस्पर जुड़े रहते हैं। बाहरी स्तर धर्मिक तन्तुओं का बना होता है और भीतरी स्तर में सूक्ष्म परत स्थिति स्थावरक (चैतकर बने जाने और फिर सिकुड़कर अपनी बहिर्गी स्थिति में ही आने वाले ठीक रक्त की तरह) तन्तुओं का जालला फैला रहता है।

अगर हमने त्रिभुज को मुरझा भागों का बालेन किया है उनमें स्पंजी या सुबिर भाग (Spongy layer) धर्मिक तन्तु हड्डियों के छिद्रों में तथा क्लैक और चर्बियों में भेजा है। इसे लाल रक्त भी कहते हैं।

जैसे जैसे हड्डे बच्चों की एवं तबलों की हड्डियों में धर्मिकावरक कला हड्डे और मोटी होती है और रक्त से परिपूर्ण रहती है। इस कला के नीचे धर्मिक तन्तु (Osteogenetic tissue) का एक स्तर रहता है जिसमें धर्मिकावरक कला (Osteoblast) होते हैं। इनके लाल रक्त क्लैक में भी कहते हैं जो प्रति मिनट निरन्तर बनती रहती है। इसी क्लैक धर्मिकावरक कलाओं से अस्थियों का

विकास होता है। प्रायः अधिक हो जाने पर यह अस्थिजनक तन्तु (Osteogenetic tissue) गड़ ही जाती है और अस्थ्यावरक कलावी पगलो होजाती है। वस्तुतः अस्थियों के जीवन और विकास का जोत यह कला ही है। इस कला के अत्र वा गड़ होजाने पर अस्थियों में क्षय उत्पन्न हो जाता है।

जैसा कि हम ऊपर भी लिख आये हैं जन्म के समय प्रदेश कालक के शरीर में हड्डियों की संख्या ७० होती है किन्तु उसके बड़े होने पर बरस्पर पूरी शरीर पर वित्त जाने के कारण उसके अपसक शरीर में केवल २०६ हड्डियाँ ही रह जाती हैं। बगैरक हड्ड में भी आरम्भ में १३ अक्षेयक होते हैं किन्तु बड़े होने पर इनकी संख्या में भी ७ की कमी हो जाती है क्योंकि तीन अक्षेयकों के वित्त जाने के बिना अण्डा विन्वास्ति (Antrum) बन जाता है और ४ के विलीन हो पुस्तस्ति वा अणुविच्छस्ति (Coccyx) बनता है।

जीव की पूरी लम्बी शरीर मारी भरकम होती है। कालकों में इन प्रकार की लम्बी हड्डियों के बिचों पर खोपी जैसी रचनाएँ होती हैं जिन्हें एपिफाइसिस कहते हैं। एपिफाइसिस पर ही इन हड्डियों के लम्बाई में बढ़ने का भार होता है। पूरी तथा एपिफाइसिस के बीच कार्टिलेज या अण्डास्ति का एक मोल रहता होता है। १५ वर्ष की आयु के बाद यह गड़ होने लगता है और २१ वर्ष की आयु तक यह पूरी शरीर पर विलीन हो जाता है। तब एपिफाइसिस लम्बी पूरी से विलीन जाती है और अलगा बड़ना सला के लिये दब जाता है।

### पेशी तन्तु Muscular tissue

शरीर में लम्बा के नीचे बला और ग्राहणों के प्राणप्रतिष्ठ

पेशियों का स्तर होता है। यह तन्तु ताल बर्त के लम्बी धुरी के पुच्छों में बने होते हैं जिसमें संकोच का गुण होता है तथा जो बाहर की ओर संकोचक तन्तु द्वारा परस्पर बंधे रहते हैं। इनके दो प्रमुख वर्ग माने जाते हैं— (१) स्वतन्त्र (Involuntary) (२) परतन्त्र (voluntary)।

सूक्ष्म रचना की दृष्टि से पेशियाँ तीन प्रकार की होती हैं—

- (१) रेखांकित (striated) परतन्त्र (skeletal)
- (२) रेखांकित (striated) हार्दिक (cardiac)
- (३) अरेखांकित (unstriated) या स्तम्भ (plain)

परतन्त्र पेशी— यह पेशी धुरी के पुच्छों (fasciculi) के सामान्य तन्तु में निहित मांसपेश द्वारा परस्पर बाधित होने से बनती है।

पेशी तन्तु— यह आकार में त्रिपात्त (तीन फलकों के) या वृत्ताकार होते हैं और इनकी सम्पाई लम्बाय १ इन्च तथा व्यास १/१० इन्च होता है। पेशीतन्तु का कोशर कुछ तात्त्विक संकोचशील द्रव्य (essential contractile substance) से युक्त तन्तु बरत नामक स्थिति-रसायन योजात्त से बना होता है। स्तम्भारी बीधों में, इसकी भीतरी बीध पर प्रभाकर केन्द्र बिंदु जाते हैं जिन्हें मेयोक्रल (muscle corpuscles) कहते हैं। मांसी के जीवन-काल में तन्तुबरत अपने भीतर के संकोचशील द्रव्य से संयुक्त रहता है। पेशी के भीतर उसके अन्तः मांसावरण में कैल्शियम का जाल फैला रहता है। बड़ी बड़ी धमनियाँ और शिराओं केवल परिमांसावरण तक रहती हैं उसके भीतर नहीं जा सकती। नाड़ियाँ भी बहुत बहुत

सूक्ष्म कर्णों में फैली रहती हैं।

स्वतन्त्र पेय्रीः— यह अनेकार्थभूत होती है और केमाकार कोवाद्युषों से बनी होती है। वे कोवाद्य समूहों में स्थित रहते तथा संपीकृत द्रव्य द्वारा परस्पर जुड़े रहते हैं। ये समूह फिर बड़े बड़े पुच्छों में एकत्रित हो जाते हैं जो परस्पर सामान्य संपीकृत तन्तु द्वारा बँधे रहते हैं।

स्वतन्त्र पेय्री के कुछ लम्बे, केमाकार केन्द्रक युक्त कोवाद्युषों के कम में होते हैं जिनकी लम्बाई लगभग १०० से ३०० इन्च तक तथा चौड़ाई ५००० इन्च होती है। इसकी रचना सामान्य होती है और इसके कोवाद्यरस में संकीचणीय द्रव्य भर रहता है। इस द्रव्य में बहुत हल्की लम्बी रेखाएँ होती हैं जो जब द्रव्य के सूत्रकाष्ठों में बिजाप को सूचित करती हैं। इसके भीतर एक अण्डाकार या बण्डाकार केन्द्रक होता है। यह पेय्रियाँ हवाम-बलिका, स्वास प्रश्वसिकाएँ एवं कुलकुल के बायुकोषों में, पुरतकोचनी में, रित्त बलिकाओं में, भ्रूज-मार्य में, गर्भाशय में, योनि और वृषण में, शुक्र-कोष और पीकपत्रग्वि में, भ्रूजबलिका में, प्लीहा के कोष्ठ में, लवण को रवेह-बलिकाओं में, बलिकाओं में, तिरासों और मेघ सन्धाल में रहती हैं।

पेय्रीतन्तु का कार्य— पेय्रीतन्तु शरीर में पक्षि उत्पन्न करते हैं। शरीर में जितनी भी रेखाएँ होती हैं वह सब पेय्रीयों के आकार पर ही होती हैं।

### भाड़ी तन्तु Nervous tissue

सूक्ष्म रचना की दृष्टि से भाड़ी तन्तु के चार मुख्य भाग होते हैं—



हम सब समर है

- (१) नाड़ी कोषाण (nerve cells)
- (२) नाड़ी तंतु (nerve fibres)
- (३) नाख्याकार कोषाण (neuroglia cells)
- (४) नाख्याकार तंतु (neuroglia fibrils)

नाड़ी कोषाण— यह नाड़ी तंतु का विशिष्ट अंगण है जो मस्तिष्क के केन्द्रों तथा कर्णों में पाये जाते हैं। इन कोषाणों से जो लम्बे लम्बे तंतु निकलते हैं उन्हें नाड़ीतंतु कहते हैं। मस्तिष्क का श्वेत भाग इन्हीं का बना हुआ है। इस तंतु के एक भाग को उस तंतु का अक्ष (axon) कहते हैं। अक्षितर कोषाणों में उनके कोनों से अनेक तंतु निकलते हैं। इनमें से एक तो अक्ष बन जाता है। बाकी सब तंतु अनेक शाखाओं में विभक्त हो जाते हैं। इन शाखा-तंतुओं को वृक्ष (dendron) कहते हैं। यह अपने समीपवर्ती कोषाण के चारों ओर फैले रहते हैं।

कोषाण का भाग वृक्ष और अक्ष सब मिल कर नाख्यक (neurons) कहलाते हैं। नाख्यक के वृक्ष भूत की शाखाओं की तरह फैले रहते हैं। इनके द्वारा जोष त में संलग्नता पायी है और अक्ष के द्वारा बाहर जाती है।

नाख्याकार तंतु— यह नाड़ी तंतु की आधार-भूत वस्तु है जो कोषाणों और तंतुओं से बनी होती है। इसके तंतु तंतुओं के आसपास नाड़ी-कोषाणों और तंतुओं के बीच में फैले रहते हैं तथा उनकी आश्रय प्रदान करते हैं।

मांस पेशी के गुण धर्म

सभी मांस पेशियों में तीन विविध पुंज वर्ण पाये जाते हैं—

(१) उत्तेजनीयता (irritability)

(२) संकोचशीलता (contractibility)

(३) वाहकता (conductivity)

जिन्ही बाह्य तापन (उत्तेजक) की क्रिया के परिणाम स्वरूप अपने नीचे कुछ परिवर्तनों के रूप में प्रतिक्रिया उत्पन्न करने की शक्ति कुछ तन्तुओं में होती है। यह परिवर्तन स्तूल (जैसे पेशियों में) एवं सूक्ष्म (जैसे नाड़ियों में) दोनों प्रकार के हो सकते हैं। सूक्ष्म तन्तुओं में उत्तेजनीयता कुछ कोशित प्रोप्लाज्म (Protoplasm) का ऐसा गुणधर्म है जिसके कारण कोशकों या उत्तेजकों से प्रभावित होने पर उसमें कुछ विशिष्ट भौतिक या रासायनिक परिवर्तन होते हैं।

संकोचशीलता— जिन्ही तन्तु में उत्तेजक की क्रिया के परिणाम स्वरूप आकार में परिवर्तन करने की शक्ति को संकोच शीलता कहते हैं। यह कुछ कोशित प्रोप्लाज्म का ऐसा गुणधर्म है जिसके कारण कोशिका जिन्ही उत्तेजक से प्रभावित होने पर अपना आकार परिवर्तित करने में समर्थ होता है।

पेशियों के संकोच के समय पेशी में विद्युत् सम्बन्धी परिवर्तन भी होता है। उस समय शक्ति का प्रत्युत्पन्न केवल तब के रूप में ही नहीं होता, बल्कि प्राप्यत तुरन्त परिपक्व में विद्युत् भी प्रकट होती है।

पेशी का स्वाभाविक संकोच Muscle tonus

संकोच और प्रसार के प्रतिरिक्त लचील पेशी दबाव या विराम पर संकोच की स्थिति में स्वभावतः रहती है जो सामान्यतः अल्प

होता है और समय समय पर परिवर्तित होता रहता है। इसे पेशी का स्वाभाविक संकोच (Muscle tonus) या स्थिति जन्म संकोच (Postural contraction) कहते हैं। पेशियों के निरन्तर स्वाभाविक संकोच के कारण शरीर में धारमयिक परिवर्तन में काम चलाना होता है। यह तापीयता का महत्वपूर्ण साधन है।

पेशी संकोच के समय प्राप्नुर्भूत शक्ति— जब पेशी संकुचित होती है तब शक्ति का अनुमान निम्न कर्णों में होता है—

- (१) ताप की उत्पत्ति
- (२) वैद्युत् शक्ति का विकास
- (३) बाह्यक्रिया की परिणामाति

इन तीनों प्रकार की शक्ति का मूल कारण संकोच के समय होने वाले रासायनिक परिवर्तन हैं। उन परिवर्तनों के हम में बहुत प्रत्यक्षों का विनिमय होता है और उनके साधारण प्रत्यक्ष ज्ञान हैं। इस प्रकार बहुत प्रत्यक्षों के परनाशकों को बरकरार चालू करने वाली रासायनिक या आन्तरिक शक्ति पुनः होकर उपर्युक्त तीनों कर्णों में प्राप्नुर्भूत होती है।

कुल शक्ति का २५% से ३३% (प्रतिशत) तक कार्य रूप में परिवर्तित होता है। व्यायाम करने वाले व्यक्तियों में यह अधिक और अवर्यक्त व्यक्तियों में कम होता है। कम्बुज शक्ति का जितना भाव कार्यरूप में उपयुक्त होता है उसे कार्य तापमय (Mechanical efficiency) कहते हैं। वाप्य से चलने वाली इन्जिन कहीं ८ से १० प्रतिशत तथा केटोल से चलने वाली इन्जिन २० प्रतिशत ही शक्ति का उपयोग कार्य में कर पाते हैं, जबकि मानव शरीर में पेशी संकोच

के समय प्राप्त होने वाली शक्ति का लगभग ४० प्रतिशत कार्यरूप में परिवर्तित होता है।

## पेशी का रासायनिक संगठन

जल ७५% : शीघ्र जल १२%

शीघ्र जल में होते हैं—

(घ) प्रोटीन्स १७ से २० प्रतिशत तक। जैसे—

१- मायोज़ुमिन (i) मायोमर या मायोमिनीन

(ii) मायो-मायोज़ुमिन

मयोमिनिन (i) मायोमिनिन या मैयमायोमिनीन

(ii) मयोमिनिन एन्ज

स्ट्रोमा प्रोटीन Stroma protein

न्यूक्लीय प्रोटीन Nucleo protein

एन्जाइम प्रोटीन-प्रोटीन एन्जाइम Myochrome और Chromo protein

सायटोक्रोम Cytochrome

कोलेजन Collagen

२- लिपिड (Fats)— फोस्फोलीपिड्स (Phospholipides) के रूप में १-१%

ओलीन Olein

स्टीरॉल Stearin

पामिटिन Palmitin

३- कार्बो-हायड्रेट्स (Carbo-hydrates) जैसे—

ग्लूकोज Glucose १ प्रतिशत

एकैयजन

१ प्रतिघट

४ तत्व वधान (Extractives) बाइडोबन रहित = १%

माइनोसिडोन (Inositol) = ०.०१%

लुप्याम (Lactic acid) बाइडोबन कुल —

डिबेटिन, डिबेटिमिन, डिबेटिन फास्फोरिक अम्ल (फास्फेट्स)

हैसोत्र फास्फेट

एडिलिन बाइरोफास्फोरिक अम्ल (Adenyl propyphosphoric acid)

बामोतिन

= २.२%

देनरिन

मूरीन— (क) जैनीन (ख) हाइपोजैनीन (ग) एमिनीन  
(घ) जैनीन

म्युडेबायोन और म्युडेमीन

५ निरिग्रिव लवण (Inorganic salts) ( १% बैसे—

सोडियम सल्फेट, कैल्शियम, मैग्नीशियम सोडियम सल्फेट, सल्फेट और सोल्फेट

६ निम्न तत्व या पाचकरण (Enzymes) बैसे—

प्रोटीसीटिक Proteolytic

अमीलसीटिक Amylolytic

ग्लाइसीटिक Glycolytic

कोगुलेटिव Coagulative

ओक्सीडेटिव Oxidative

## हमारे शरीर की रचना

### रक्त

रक्त एक द्रव ( तरल ) संयोजक तन्तु है। इसमें कोषाढ ( कल ) द्रव रूप में एवं बहुत अधिक परिमाण में रहते हैं और वे ही अधिक परिमाण में रहने वाले अपने पम्पकनी पदार्थों के एक दूसरे से सतब बने रहते हुए भी मिल जुल कर एक बारा बनते हैं। अन्य संयोजक तन्तुओं की भाँति रक्त का विकास भी मध्यस्थ से ही होता है। इसी तरल माध्यम के द्वारा शरीर के अन्य सब तन्तु सम्मान या परोक्ष रूप से जोड़ल पाते हैं और इसी रक्त के द्वारा ही शरीर की सभी क्रियाओं में उत्पन्न होने वाले मल पदार्थों को भी उन उन तन्तुओं से बाहर निकाला जाता है।

रक्त के कार्य - (१) रक्त ही शरीर की पाचन मशीन से शोषित किये गये आहार और अन्य पदार्थों को शरीर के अन्य सब तन्तुओं तक पहुँचाता है और इस प्रकार इन तन्तुओं को उनकी वृद्धि और सम्मान के लिये आवश्यक सब प्राप्त करता है। (२) शरीर के कुपकुत्तों में वायु से शोषित की गई कार्बोडीऑक्साइड को तन्तुओं तक पहुँचा कर उन्हें विशेष ताप-मान देता है। इस प्रकार आहार के सबों और कार्बोडीऑक्साइड का उन तन्तुओं में जीवनोपयोगी बनल होता है और वसते शक्ति उत्पन्न होती है।

(३) शरीर के अन्दर उत्पन्न होने वाले मल पदार्थों, जैसे कार्बन डायोक्साइड और दुग्धम्ल (Lactic acid  $\text{CH}_3\text{CH}(\text{OH})\text{COOH}$ ) और अन्य हानिकारक द्रव्यों, को रक्त ही मलमूत्रार्थ के पानी तक पहुँचाता है और तब वहाँ से उनका शरीर के बाहर त्याग दिया जाता है।

(४) विभिन्न अंग-संघों को रक्त ही शरीर के तन्तुओं तक पहुँचाता है जिससे शरीर के विभिन्न विभिन्न अंगों की क्रियाओं में सहकर्मिता हो सके।

(५) शरीर में उत्पन्न ताप का समान रूप से वितरण कर रक्त ही इसके सांक्रुहिक ताप-कर्म को एक निश्चित सीमा पर बनाये रखता है।

(६) रक्त ही अनेक श्वेतकणों के द्वारा हानिकारक जीवाणुओं से शरीर की रक्षा करता रहता है।

रक्त की सूक्ष्म रचना— रक्त में मुख्यतः द्रव या तरल भाग होता है जिसे रक्त-रस (Plasma) कहते हैं। इस द्रव में अनेक सूक्ष्म कण होते हैं जो तीन प्रकार के होते हैं—

(१) रक्त कण Erythrocytes या Red blood Corpuscles

(२) श्वेत कण Leucocytes या white blood corpuscles

(३) रक्त प्लेटिन् Thrombocytes या blood platelets

रक्त का लगभग ४३% भाग कणों के शरीर लगभग ५५% भाग रक्त-रस से बनता है। रक्त का विशिष्ट घनत्व स्वभावता १.०५२ से १.०६० तक होता है।

रक्त का तापक्रम— इसका शीतल तापक्रम ३७°C सेन्टीग्रेड या ९८.४ फाहरेनहीट है। मानव शरीर का रक्त जल से नीचे गुना पड़ा होता है।

घाम्लक— यह रक्त सम्पूर्ण शरीर भर का लगभग ७.५ से लेकर १० प्रतिशत तक (शीतल ८.८ प्रतिशत) घर्चातु ५.५ से ५.६ तक होता है। इसका वितरण निम्नोक्त रूप में होता है—

मायः  $\frac{1}{2}$  भाग हृदय, फुफ्फुस और रक्त-बहु स्रोत में

मायः  $\frac{1}{2}$  भाग यकृत में

मायः  $\frac{1}{2}$  भाग विधायावस्था की पेशी में

मायः  $\frac{1}{2}$  भाग अन्य अंगों में

### रक्त रस Plasma

यह रक्त का तरल भाग है। इसका संघटन निम्नानुसार है—

|             |     |         |                     |
|-------------|-----|---------|---------------------|
| (१) जल      | ९०% |         |                     |
| (२) प्रोटीन | ७%  | जिनमें— | सीरम एल्ब्यूमिन ४५% |
|             |     |         | ग्लोब्यूलिन १५%     |
|             |     |         | ग्लूबुलिन ०४%       |

### (३) रक्त पदार्थ Extractives—

(अ) नाइट्रोजन युक्तः— यूरिया, क्रियात्मक अमिनोअम्ल  
क्रियेडिन क्रियेडिनिन, खैनीन,  
हाइपो खैनीन।  
एडिनिन थीनिन।

नाइट्रोजन रहितः— फास्फोलिपिन कोलेस्टरोल  
लेसिथिन, ग्लुकोज स्नेह, स्नेहात्मक  
द्राव पदार्थ

### विघटन Enzymes— हाईड्रोजन विघटक, प्रोटीन

विघटक ओक्सीडेशन परिवर्तक स्नेह

विघटक केन्द्रक विघटक हिमोग्लोबिन्स।

(४) अन्य पदार्थः— अम्लः जल रोप प्रतिरोधक पदार्थ, वृद्ध  
(एन्सेफलिन) ऐम्बोसेप्टर्स Amboceptors



(१) रैतों:- मायसीजन, कार्बन डायोक्साइड, नाइट्रोजन ।

रक्तकण Red-blood corpuscles

ये गोत होते हैं गरम रोगों वायुओं में मरते (जिनके हुए रंग के) होते हैं और मुद्रा के समान रिक पड़ते हैं । इनमें रंग नहीं होते । इनका व्यास लगभग  $\frac{1}{100}$  इंच तथा घोटाई  $\frac{1}{100}$  इंच होती है । प्रत्येक होने पर ये करण पहले नीले या हलके लाल रंग के दिखाई पड़ते हैं । जब यह निम्ने पड़ते हैं तो इनका रंग गहरा लाल होता है । इन कणों में बरस्वर चिपकने की प्रवृत्ति होती है । जीवित अवस्था में इनमें लचीलापन होता है ।

मसूर-वामनिक एवं प्लेट विटलों के प्रभाव से रक्त का विलयन हो जाता है ।

रक्तकण की रचना:- इसकी रचना एक रंग रहित लिफ्ट की तरह होती है जिसमें एक गर्म-द्रव पदार्थ भरा रहता है । इसमें एक रक्तकण इन्ने की प्रभावता होने से रक्तकण का रंग भी लाल प्रतीत होता है । प्रत्येक कण में लगभग  $\frac{1}{100}$  मात्रा भर रहता है । प्रत्येक कण में  $20\%$  रक्त रक्तकण इन्ने होता है ।

रक्तकण का रासायनिक संगठन:-

|                   |           |
|-------------------|-----------|
| जल                | ६१%       |
| रक्त रक्तकण       | १९%       |
| द्रव्य ठोस पदार्थ | १% बीते:- |

- (१) सेरिय Organics:-
- (अ) प्रोटीन • ६%
  - (ब) लिपिड
  - (स) कार्बोहाइड्रेट

हमारे शरीर की रचना

(२) निरिन्ध्रिय (Inorganic) जैसे -

(घ) पोटेशियम, कैल्शियम और मैग्नीशियम के सल्फाइड

(ङ) पोटेशियम, कैल्शियम और मैग्नीशियम के सक्सेट

(च) पोटेशियम कैल्शियम और मैग्नीशियम के फास्फेट

कणों में पोटेशियम का पूर्व रक्त रस में सोडियम और कैल्शियम सबलों का प्राचिद्य रहता है।

संख्या - अनुमान लगाना गया है कि हमारे शरीर में प्रत्येक क्यूबिक मिलीमीटर रक्त में ४३ से ५२ लाख तक रक्तकण के कोपाद्य होते हैं और लगभग ७००० इलेक्ट्रॉन होते हैं। रक्तियों की प्रारम्भिक गर्मावस्था में रक्तगण प्रदेय के कुछ सकेन्द्रक गर्म-कोपाद्यों के केन्द्रक विभक्त होते हैं और बाहरी विभक्त होते होते रक्तकणों में परिवर्तित हो जाते हैं।

प्रतिदिन रक्तकणों का नाश होता रहता है और इस क्षति की पूर्ति करने के लिये रक्तमण्डल में निरन्तर नये नये कण बनते रहते हैं। रक्तमण्डल में जो विकसित होने वाले रक्त कणों की संख्या ४० से ५० लाख तक होती है और इनमें लगभग १५ लाख रक्त कण प्रतिदिन बनते रहते हैं।

अनुपम में लगभग बार या पाँच सप्ताह के जीवन-चक्र के बाद रक्तकण विक्षेपित हो जाते हैं और रक्तमण्डल द्रव्य भी विक्षेपित हो जाता है जिससे पित्तमण्डल द्रव्य बनते हैं। इन पित्तमण्डल द्रव्य का त्याग मूत्र और पुरीष द्वारा निरन्तर होता रहता है।

रक्तमण्डल द्रव्य (Haemoglobin) - इसके कारण रक्त का रंग लाल रहता है। यह एक संयुक्त प्रोटीन है जो ६६% ग्लो

(Globin) जिसमें आयरन का आम भी रहता है तथा ४% रक्त-  
रंगजन (Haemochromogen)  $C_{54}H_{56}O_4N_4Fe$   
जिसमें ०.३३२ प्रतिशत लोहा रहता है, के मिलने से बना है।

१०० ग्राम रक्त में १४ या १२ ग्राम रक्त-रंगजन रहता  
है। आक्सीजन को छोड़ने की रक्त की क्षमति पूर्ण रूप से रक्त-रक्तों  
में विद्यमान रक्त-रंगजन के परिमाण पर निर्भर होती है। रक्त-  
रंगजन का यह एक विशिष्ट गुण है कि वह आक्सीजन के साथ  
आसानी से संयुक्त हो जाता है और इसकी ही आसानी से पृथक्  
होकर भी देता है। इसका यह गुण ही जीवन के लिये महत्वपूर्ण है।

श्वेतकण (White blood corpuscles) — यह शरीर  
के एक प्रकार के कोशिका होते हैं। कुछ मामलों में ये छोटे होते हैं किन्तु  
अधिकतर बड़े होते हैं। इनमें गति करने की क्षमता होती है। प्रत्येक  
व्यक्ति के शरीर में इनकी औसत संख्या सातह सैद्धांतिक मिलीमीटर  
रक्त में ७००० से ८००० तक होती है। इनमें जीवाणु मारण  
(Phagocytosis) का भी गुण होता है। बुढ़ापे में शरीर  
जवान करने के बाद इनकी संख्या घट जाती है।

श्वेतकणों का कार्य — शरीर की रक्षा के लिये यह  
एक प्रकार के कोशिकाओं की तरह होते हैं। जब शरीर पर  
कोई बाहरी आक्रमण होता है तब यह शरीर का रक्त से  
जैसे रक्त को रक्षा करने के लिये निकट संघर्ष करते हैं। यदि  
श्वेतकण घन आक्रमणकारी जीवाणुओं से घनघन हुए तो बाह्य  
प्रकार में रक्त से रक्त निकल जाते हैं। इसे जीवाणु मारण (Phagocy-  
tosis) की क्रिया कहते हैं। रोगोत्पादक जीवाणुओं से शरीर की  
रक्षा के लिये इनका अतिरिक्त महत्वपूर्ण है। इनकी संख्या

रक्त होने पर शरीर पर अनेक प्रकार के जीवाणुओं का आक्रमण होने लगता है और शरीर रक्त होकर शरीर में मृत्यु हो जाती है।

हृदय की चक्रीय का कारण—

प्रत्येक प्राणी के शरीर इस कारण मृत्यु के शरीर में रहता हृदय निरन्तर चक्रीय रहता है। हृदय की यह चक्रीय ही जीवन के अस्तित्व की ओर है। इस चक्रीय का कारण भी रक्त ही है। रक्त के अनेक तत्व हृदय की नियमित गति के लिये आवश्यक हैं— विशेषकर सोडियम पोटाशियम तथा कैल्शियम के अस्तित्व में। इन तत्वों की एक निश्चित अनुपात में उपाय गति के कारण ही हृदय स्पन्दन करता है। अतः यह स्पष्ट है कि पोटाशियम ही अतः शरीर में अस्तित्व में रहता है और यह शक्ति ही हृदय की चक्रीय का कारण है। हृदय में ऑटोमेटरी मोशन (Automatinogen) नामक एक ऐडिप (Organic) पदार्थ रहता है जो पोटाशियम के द्वारा (Automatin) में परिवर्तित होता है जिससे हृदय में उत्तेजना होती है।

हृदय धड़कियों की रचना ऐसी है कि वे आन्तरिक द्वारा परस्पर सम्बन्धित हैं। अतः हृदय के एक भाग में उत्तेजित उत्तेजना इन्हीं धड़कियों के द्वारा दूसरे भाग में पहुँच जाती है। अन्य धड़कियों के समान हृदय की धड़कियों में भी संकोच के समय विद्यमान विद्युत् भारों की उत्पत्ति होती है।

## आहार

शरीर के द्वारा रात-दिन किये जाने वाले कार्यों में और अन्य

घोर जेबन जैसे घनेक कु-साध्य रोगों के जनक हैं) पर आते हैं। क्योंकि, ऐसा भाव्य होता है भागो मनु 'बिरल' परमाणु-केन्द्रीय (Nuclear) तियमों में जी हस्तक्षेप कर सकते हैं।

वास्तव में 'बिरल' ऐसे सूक्ष्म जीवाणु हैं जो इस 'डी एन ए' के ही भागो एक जैसे हुए पुण्य हैं। जब यह किसी कोषाणु में आ घुसते हैं तब यह उसके सम्पूर्ण अणु या पठन पर घातक हमला बोल देते हैं। स्वयं कोषाणु के आवश्यक जैविक घटकों के ही भागो यह कुछ भलत कर्णों में डले हुए टुकड़े हैं। कोषाणु में घुस आकर यह उन कोषाणु की भलत कल के जमाते हैं और इस प्रकार उसे रम्य बना देते हैं। 'कैंसर' (Cancer) भी एक ऐसी ही बीमारी है जो उन कोषाणुओं की वृद्धि और बहु-भजन (Multiplication) पर नियन्त्रण रखने वाली किसी प्रक्रिया के ही निवृत्ततम सम्बन्ध में जैवी हुई है। "डी एन ए" इस प्रक्रिया के नेत्र में होता है और 'कन्टर' रोग की उत्पन्नक प्रक्रिया में अनिवार्य आन्तरिक रूप में रहता है। यही भी कोषाणुओं के केन्द्रों हैं। आनेवाले उचित कुछ भलत जमाने लागते हैं जिससे कोषाणुओं की अनियन्त्रित वृद्धि और विभाजन होने लगता है।

जब एक स्वस्थ कोषाणु विभाजित होता है— और सभी जीवित कोषाणु एक जैसे हुए नियमित कालांतर पर ऐसा व्यवह करने ही— तब उन कोषाणुओं की प्राकृतिक वृद्धि और विभाजन के उचित नियमों वा सत्त्व (Set) उत्त विभाजन के बाद उत्पन्न होने वाली नये कोषाणुओं को विराटत के रूप में पहुँचा दिया जाता है। यदि ऐसा न हो तो शरीर में जीवशक्त पराजयता ही भव जाय। डेम्ब्रिज (इंग्लैण्ड) की कैंसेरिज्ज रसायनशास्त्रा में एक सत्य संपुक्त शोधकार्य

कोषाद्यु का रासायनिक संगठन और उसका वास्तविक विस्तार ११

करते हुए जे डी वाटसन (J D Watson) और फ्रैंक एच सी क्रिक (F H C. Crick) नामक दो वैज्ञानिकों ने सन् १९५३ में यह सिद्ध कर दिया कि कोषाद्युओं का यह विभाजन किस प्रकार होता है।

समूहों ने बताया कि सर्पिलाकार "डीएनए" का भुंजाव, विभाजन होने के पहिले कुछ डीना होकर जुल पड़ता है। "डीएनए" के दोनों भुंजावों से एक एक तन्तु निकल कर प्रत्येक नये बनने वाले कोषाद्यु के केन्द्र में जा पहुँचते हैं। प्रत्येक तन्तु के चारों ओर तब एक दूसरा तन्तु बनाया जाता है। जिन चार रासायनिकों के बर्ण का हम ऊपर उल्लेख कर आये हैं उनके पारस्परिक सम्बन्धों के विचारक नियमों के सख्त नियन्त्रण के कारण नये कोषाद्युओं की यह दुहरी सर्पिलाकार भू-जालें उन उत्पादक कोषाद्युओं की भू-जालों के बिल्कुल समुत्पन्न ही होती हैं।

अपना प्रश्न यह होता है कि कोषाद्यु के भीतर जो कुछ भी हलचल होती रहती है उसको "डीएनए" किस प्रकार अपने बल में रखता है? इस प्रश्न का उत्तर प्रोटीनों के घठन पर निर्भर है।

यदि हम "डीएनए" को कोषाद्यु का मस्तिष्क मानें तो प्रोटीनों को उसका मांस और रक्त मानना होगा।

जैसा कि हम प्रोटीनों का विवरण देते हुए वहीं सिद्ध आये हैं कुल मिलाकर २० रासायनिकों अथवा आमिनो-एसिडों से ही प्रोटीन बने हुए हैं। प्रोटीन का एक घट्ट इन आमिनो-एसिडों की एक या अधिक भू-जालों से जो एक दूसरी में जुड़ी रहती है बना हुआ है। इन आमिनो-एसिडों का क्रम (Sequence) ही उस

घौर बेधक जैसे धमेक कुत्ताघ्य रीषों के जगक हैं) पर जाते हैं। क्योंकि ऐसा मात्तुम होता है मानो यह 'बिरस' परमाणु-केन्द्रीय (Nuclear) नियमों में भी हस्तक्षेप कर सके हैं।

वास्तव में 'बिरस' ऐसे सूक्ष्म बीबास हैं जो इस 'डी एन ए' में ही मानो एक बेंच हुए पुष्प हैं। जब यह किसी कोषासु में घा घुसते हैं तब वह उसके सम्पूर्ण अनास या यठन पर जातक हमला बोम डेते हैं। स्वयं कोषासु के प्रावरणक जीविक घटकों के ही मानो यह कुछ घसत कपों में डसे हुए कुकड़े हैं। कोषासु में घुस आकर वह उस कोषासु की घसत कङ्क से जलते हैं और इस प्रकार उसे दण्ड बना डेते हैं। 'कैंसर' (Cancer) भी एक ऐसी ही बीमारी है जो उन कोषासुओं की बुद्धि और बहु-जनन (Multiplication) पर नियन्त्रण रखने वाली किसी प्रक्रिया के ही निवर्तन सम्बन्ध में खँबी हुई है। 'डी एन ए' इस प्रक्रिया के बैन्ध में होता है और 'कैंसर' रोग की उत्पत्तिक प्रक्रिया में अनिवार्य आन्तरिक रूत में रहता है। यहाँ भी कोषासुओं के केन्द्रों में आनेवाले घरेलू कुछ घसत चलने लगते हैं जिससे कोषासुओं की अनियन्त्रित बुद्धि और बिभाजन होने लगता है।

जब एक स्वस्थ कोषासु बिभाजित होता है— और सभी जीवित कोषासु एक बेंच हुए नियमित कालान्तर पर ऐसा प्रवर्ध करते हैं— तब उन कोषासुओं की प्राकृतिक बुद्धि और बिभाजन के पश्चित नियमों का सञ्च (Set) घसत बिभाजन के बाद उत्पन्न होने वाले नये कोषासुओं को पिरातत के रूप में पहुँचा दिया जाता है। यदि ऐसा न हो तो घरीर में जीवात्मक अराजकता ही अन्ध बाध। कैंसर (इन्फेन्ड) की रूबेन्डिता रसायनशास्त्र में एक ताब तंतुत घोषबायं

कोषाणु का रासायनिक संगठन और उसका आणविक विनियोग ६१

करते हुए जे डी वाटसन (J D Watson) और एक एच. सी क्रिक (F H C. Crick) नामक दो वैज्ञानिकों ने सन् १९५३ में यह सिद्ध कर दिखाया कि कोषाणुओं का यह विनियोग किस प्रकार होता है।

उन्होंने सुझाया कि सर्पिलाकार 'डीएनए' का पुंजाव, विनियोग होने के पहिले कुछ टीका होकर कुल पड़ता है। 'डीएनए' के दोनों पुंजावों से एक एक तन्तु निरगत कर प्रत्येक नये बनने वाले कोषाणु के केन्द्र में जा पहुँचते हैं। प्रत्येक तन्तु के चारों ओर तब एक दूसरा तन्तु बनाया जाता है। जिन चार रासायनिकों के वर्ण का हम ऊपर उल्लेख कर आये हैं उनके पारस्परिक सम्बन्धों के विधायक नियमों के सख्त नियन्त्रण के कारण नये कोषाणुओं की वह कुहरी सर्पिलाकार भू-जलाएं उन उत्पादक कोषाणुओं की भू-जलाओं के बिल्कुल अनुकूप ही होती हैं।

अपना प्रश्न यह होता है कि कोषाणु के भीतर जो कुछ भी हलचल होती रहती है उसको 'डीएनए' किस प्रकार अपने बग में रखता है? इस प्रश्न का उत्तर प्रोटीनों के गठन पर निर्भर है।

यदि हम 'डीएनए' को कोषाणु का मस्तिष्क मानें तो प्रोटीनों को उसका मोल और रक्त मानना होगा।

जैसा कि हम प्रोटीनों का विवरण देते हुए वहीं लिख आये हैं कुल मिलाकर २० रासायनिकों यथवा आमिनो-एसिडों ही प्रोटीन बने हुए हैं। प्रोटीन का एक सख्त इन आमिनो-एसिडों की एक या अधिक भू-जलाओं से जो एक दूसरी में जुड़ी रहती है, बना हुआ है। इन आमिनो-एसिडों का क्रम (Sequence) ही उस



प्रोटीन की प्रकृति का विर्णायक होता है कुछ प्रोटीन ग्लूकामाघों में हजारों कड़ियें होती हैं और कुछ में केवल सेरकों ही। परन्तु उन सब की बनावट में आमारसूत रासायनिक विसृज्य बही होते हैं उनमें कोई अन्तर नहीं होता।

अबतक केवल दो छोटे प्रोटीन अणुओं में ही उनकी बनावट की वास्तविक क्रम-गुणकता का पता लग सका है। सन् १९५५ ई० में एक संघर (F Sanger) और उनके सहकर्मियों ने कैम्ब्रिडज रासायनशाला की 'मोलीनपुलर बायसोबी पुनिट' में ९ वर्षों के निरन्तर शोध-प्रयासों के बाद इन्सुलीन के सम्पूर्ण रचनात्मक वर्णों का पता लगाना था। सन् १९६० के कुछ महीने के अन्तिम सप्ताह में ट्यूबिन्जन (Tubingen) (जर्मनी) में जर्मन वैज्ञानिकों के एक वर्ग ने समास के "मोजैक विरस" (Mosaic virus) के एक दूसरे प्रोटीन आवरण के विसृज्य क्रमिक विरसेषण की जानकारी पा लेने की घोषणा की थी।

परन्तु इन प्रोटीनों का रचना-क्रम केवल उनकी आधी कहानी ही कह पाता है। रचना-क्रम की जानकारी हमें ऐसा कोई धुराय नहीं देती जिससे हम यह जान सकें कि प्रोटीन अपना काम (प्राणियों के शरीरों की बनावट और वृद्धि में) कैसे करता है। ठीक यही आकर हमें यह जानने की जरूरत होती है कि इन अणुओं का ढाँचा कैसे छाड़ा दिया गया है। इस बात की अन्तक सी हमें मिल ही चुकी है कि प्राणी-जीवन की इमारत की नींव में आमिनो-एसिडों की सम्बन्धी ग्लूकामाघों जटिल त्रि-पारिचक ( Three-dimensional ) व्यवस्था में अपने दूसरे बनावट लगी हुई हैं।

कोवाबू का रसायनिक संगठन और उसका रासायनिक विरूपण ३३

(Myoglobin) "मायोग्लोबिन" भी एक प्रोटीन है जिस प्रत्येक प्राणी मनुष्य और वन्य अपनी रक्तों में आक्सीजन के सम्बन्ध के काम में लेते हैं। आक्सीजन के एक परमाणु को कुछ छोटे समय तक अपने पास बँध रखने का काम यह मायोग्लोबिन करता है। इस प्रोटीन के अणुओं में लोहा रहता है जिसे हीम (Hæm) बर्ण कहते हैं। यह अणु चारी संख्या में एक अणु इकट्ठे रहते हैं और इस प्रकार सामूहिक रूप में आक्सीजन बरमातु को कुछ देर अपने पास रोके रखते हैं। मायोग्लोबिन के अणुओं का एक बड़ा नाम उत्त हिम बर्ण को अपनी कुछ स्थिति में बनावे रखने के काम में आता है। अभी तक यह सम्बन्ध में नहीं बताया है कि इतना सरल काम करने के लिये मायोग्लोबिन के इतने बड़े अणु की आवश्यकता क्यों पड़ती है ?

हेमोग्लोबिन, जिसकी बात हम ऊपर लिस चुके हैं मायोग्लोबिन अणु से चार गुना बड़ा होता है। मायोग्लोबिन रक्तों में भी काम करता है ठीक वही काम हेमोग्लोबिन रक्त में करता रहता है।

इस बात का मतलब तो लग चुका है कि हेमोग्लोबिन का अणु वास्तव में चार छोटी इकाइयों से बना हुआ है। प्रत्येक इकाई अपनी बनावट में विस्तृत मायोग्लोबिन की तरह ही होती है। यह बात देखते हुए इस अनुमान की पुष्टि होती है कि प्रोटीनों के अणुओं की स्थिति-व्यवस्था (Spatial arrangement) ही उनके असंग अलग-अलग कार्यों का नियन्त्रण करती है।

प्रोटीनों और कोवाबू केन्द्रों में क्या वास्तविक सम्बन्ध है—

## चौथा परिच्छेद

### सत्व, अणु और परमाणु

अब हम उक्त मूल छोट और मंची चीजों से न दिक पड़ने वाले आकार तक आ पहुँचे हैं जहाँ अड़े होकर और जिसके बल पर हम यह बतला सके कि प्रत्येक मनुष्य उसके शरीर को बनाने वाले घटकों-परमाणु-इलों के बल पर, समर है।

हमारे शरीर के निर्माण में लगे हुए कार्बन हाइड्रोजन, ऑक्सीजन नाइट्रोजन, गंधक, फोस्फोरस कैल्शियम और सोडियम-सब सत्व हैं। इसी प्रकार लोहा, ताँबा जैसी छोटी पाप इत्यादि सब सत्व कहलाते हैं।

कुछ ही वर्ष पहिले तक वैज्ञानिक यही मानते थे कि पृथ्वी के वायु-मण्डल में और उसकी पपड़ी में भीतर पाई जाने वाली सब चीजें और अविज्ञ घातुएँ अपने इन्ही सूतकों में बिल-प्रकृति द्वारा बनाई हुई हैं। यह अविभाज्य हैं। उनके और कोई घटक (Components) नहीं होंगे। प्रकृति ने उन्हें आरम्भ से इन तरीकों में ही रखा है। इसलिये उनको 'मूलतत्त्व' कहा गया। पछिल्ले आठ के वैज्ञानिकों ने कुछ घातुत्वजनक उपकरण बनाकर उनके द्वारा इन तत्त्वों को तोड़-फोड़ कर इनको बनाने वाले परमाणुओं इलों और उन से भी आने लगे हुए वैज्ञानिक प्रकृत (Quanta-

tum fields) जो इनकी धातुम धीर धारमिक इकाइयाँ माने जाती हैं, तक का ज्ञान प्राप्त कर लिया है फिर भी इनको "भूततत्त्व" या तत्त्व (Elements) ही कहा जा रहा है।

हाइड्रोजन से लेकर यूरेनियम तक इन तत्त्वों की कुल संख्या ८२ है। यद्यपि धातु विज्ञान जगत में यूरेनियम से धीर भी धातु लेकर १० तत्वों का रसायन-धाराओं में कुञ्जित निर्माण कर लिया है फिर भी अब वसों तत्वों का प्रकृति में अस्तित्व नहीं पाया जाता।

समय बीतने के साथ वैज्ञानिक धर्मों धीर उपकरणों की शक्ति-धामन्य बढ़ी धीर वैज्ञानिकों ने इनकी मध्य लेकर तत्वों को उनके सूक्ष्मतम धर्मों या वसों तक तोड़ डाला। तत्वों के इन सूक्ष्मतम वसों को उनके परमाणु (Atoms) कहा गया। जिन ८२ तत्वों का हम ऊपर शलेख कर धाते हैं उनके परमाणुओं के अनेक तत्त्व के मेल से धातु धीर दिखाई पड़ने वाली लाजों धीर करोड़ों जीवों बन जाती हैं। इस बात को समझने के लिये हम हिन्दी वर्णमाला का उदाहरण ले सकते हैं। हिन्दी बधमाला में १२ स्वर धीर २९ व्यञ्जन-कुल ४८ वध हैं; परन्तु वध वसों को निम्न निम्न प्रकार से जोड़कर इन हजारों लाजों शब्दों को बना सकते हैं। इसी प्रकार इन निम्न निम्न ८२ तत्वों के परमाणुओं को अनेक तत्त्व से मिला कर संसार में दिख पड़ने वाले अनेक पदार्थ बधमेल का सकते हैं।

इस बात को हम एक दूसरे उदाहरण में भी समझ सकते हैं। मान लीजिये; अन्धके पास २ या ९ रंगों के धाते हैं। रंगों की संख्या

बड़ा कर दिया जाय तो धान देखेंगे कि वे सब चीजें हैं जिसने लगे हैं, क्योंकि सब प्रत्येक परमाणु का व्यास १० इन्च हो गया है।

प्रथम तो हमने यह देखा कि परमाणु का अधिकतम जाली स्थान होता है। फिर, यदि हम परमाणु के जलते हुए भागों की गति हटाने कर सकें तो देखेंगे कि इसमें दो कणों (Particles) की प्रतिरिक्त धीरे कुछ भी नहीं है। इनमें से एक कण तो परमाणु के केन्द्र में है। दूसरा कण बड़ी तीव्र गति से इस केन्द्रीय कण के चारों ओर घूम रहा है— उसी तरह जैसे किसी डोरी के सिरे पर बंधी हुई तैल घुमने वाले के सिरे के चारों ओर घूमती है। परमाणु के केन्द्र में जो छोटा कण बैठा हुआ है उसे प्रोटान (Proton) कहते हैं। जो छोटा कण उस प्रोटान के चारों ओर घूमता हुआ वेब से घूम रहा है उसे एलेक्ट्रान (Electron) कहते हैं। इस प्रकार हाइड्रोजन परमाणु हुआ। केन्द्र में एक प्रोटान और उसके चारों ओर घूमता हुआ एक एलेक्ट्रान।

यह दोनों ही कण — प्रोटान और एलेक्ट्रान-विद्युती के दो रूप हैं। प्रोटान पर ऋणात्मक विद्युती (Positive electricity) का आवेश (Charge) होता है और एलेक्ट्रान पर ऋणात्मक विद्युती (Negative electricity) का आवेश होता है।

यह विद्युती वास्तव में क्या चीज है इसकी जर्चा हम भागे चलकर करेंगे।

इन दोनों क्षुब्धियों, प्रोटान और एलेक्ट्रान के मध्य एक प्रबल आकर्षण होता है — यह वही आकर्षण है जो ऋणात्मक और ऋणात्मक विद्युत् आवेशों के बीच सरा गीबुर रहता है। सब

तो यह है कि इलेक्ट्रान और प्रोटान दोनों ही विद्युत के धी धरा हैं। धाकण ही इलेक्ट्रान को प्रोटान की ओर धीनर को लीचना रहना है। उधर इलेक्ट्रान का स्वभाव या उसकी प्रवृत्ति हमेशा ऋजुरेखा (सरल रेखा) में ही गति करते रहने की होती है। उमका यह स्वभाव ही उसे प्रोटान के धानी ओर लीचने क बल को प्रतिगुणित दिते रहना है। दुपरे शब्दों में, यदि धाकण न हो तो इलेक्ट्रान ऋजुरेखा में चलता हुआ प्रोटान में दूर उड़ जायगा, परन्तु प्रोटान का उसको धानी ओर धाकणित करने का स्वभाव उसे धके रकना है। इस प्रकार इलेक्ट्रान हमेशा प्रोटान के धारों ओर बलकर जायता रहना है। यह बहुत धुष उसी तरह के बलों का लवीजन या मैम होता है जो धीरी के निरे पर बबी यँ धुमाले पर उलान होने हैं। यदि धीरी दूध जाय तो यँ उमे धुमाले बाले के हाथ से धिदक कर दूर जा पड़ेगी पर यदि वह नहीं दूटती तो धीरी उमक हाथ और यँ के बीच धाकणल-बल के बल में बान करती रहेगी। धीरी सब यँ की उसके तिर के धारों ओर एक गोम बलकर में बलती रहेगी।

जो प्रोटानों में धागस में बिधपटा होना और जो इलेक्ट्रानों में भी धर्यान् एक दुमरे के धास लाने बाले पर वह एक लदके क साथ दूर दूर हो लारेंगे धी बान धुम्बकों (Magnets) पर भी लागू होगी है। लीता कि हम धागे बलकर बलतावेने बिद्युन् क धुम्बकन का एक दुमरे के साथ धलिध सम्बन्ध है और वे एक दुमरे से धलय नहीं रह सकते।

एक प्रोटान का १८३७ इलेक्ट्रान कलों के बराबर धारी

के निर्माण में कार्बोहाइड्रेटों और प्रोटीनों का ही एक भाग हाव रहता है और यह दोनों ही रासायनिक बर्च कार्बन के ही छोट आकार पर बने कड़े रहते हैं।

तत्वों की अपनी विरासती में कार्बन ही सबसे अधिक मिलन सार तत्व है। अपनी आवधिक बनावट और क्रमिक तात्त्विका (Periodic table) में अपनी स्थिति के कारण कार्बन के परमाणु न केवल अपने सगे भाई धाव कार्बन परमाणुओं से अपितु धावसीजन और हाइड्रोजन जैसे तत्वों के परमाणुओं से भी बड़ी कुयी के साथ संयोग कर लेते हैं। इसे संयोग-शक्ति (Power of valency) कहते हैं। उसकी इसी शक्ति पर ही संसार की करोड़ों और करोड़ों जिन जिन वस्तुएं बन कयी हैं।

कार्बन के बाद कम तात्त्विका में आठवां तत्व है नाइट्रोजन जिसमें एक परमाणु के रंग में ७ प्रोटान और ७ ही न्यूट्रान रहते हैं और उनके चारों ओर ७ इलेक्ट्रान घूमते रहते हैं। इसका परमाणु-भार १४ है। उसके बाद आठवां तत्व धावसीजन है जिसके परमाणु-भंग में ८ प्रोटान और ८ न्यूट्रान होते हैं और ८ ही इलेक्ट्रान चारों ओर घूमते हैं। इसका परमाणु भार १६ है। इस प्रकार तत्वों का यह क्रम अपने कैली में अपने से रहसि के तत्व के परमाणु-भंग के प्रोटानों से एक एक अधिक प्रोटान बढ़ाता जाता है और अंत में हम संख्या २२ के तत्व यूरेनियम तक आ पहुँचते हैं जिसके एक परमाणु के रंग में २२ प्रोटान होते हैं और २२ ही इलेक्ट्रान उसके चारों ओर घनेक "शेलों" में या बलाधी पर बबडर जाते रहते हैं।

हमारे शरीरों के लिये नाइट्रोजन (जल संख्या ७) और धावसीजन (जल संख्या ८) यह दोनों तमें बहुत अधिक आवश्यक

साथ, घट्ट घीर परमाणु

हैं। हमारे चारों ओर की हवा में  $\frac{1}{2}$  नाइट्रोजन और  $\frac{1}{2}$  ऑक्सीजन का मिश्रण है। जब हम साँस लेते हैं तो हवा के इसी मिश्रण को भीतर खींचते हैं। हमारे शरीर का सुन इस मिश्रण में से ऑक्सीजन ग्रहण कर लेता है। ऑक्सीजन को हमारे शरीर के विभिन्न अंगों पर प्रतिक्रिया होनी है और इस प्रकार हमारा जीना सम्भव होता है। नाइट्रोजन को हम अपने साँस के साथ बाहर निकाल देते हैं।

परमाणु सामान्यतः एक दूसरे से समूहों के रूप में सम्बद्ध रहते हैं। इन समूहों को अणु (Molecules) कहते हैं। कुछ अणु बहुत छोटे होते हैं। उदाहरण के लिये वायु अणुओं के समूहों की कमी होती है जिनमें दो दो परमाणु होते हैं। बड़े अणु भी होते हैं। हमारे शरीर में कुछ अणु तो हजारों परमाणुओं के बने होते हैं।

अणु सदा गति करते रहते हैं। हमारे चारों ओर की हवा में अणु लगभग १० मील प्रति घण्टे की गति से चलते फिरते रहते हैं। यहाँ तक कि ठोस पदार्थों में जो कि सतत घीर गतिहीन दिखाई देने हैं अणु बड़ी तेजी से आगे पीछे दूबने रहते हैं। तापमान जितना अधिक होता है उतनी ही अधिक उनकी गति होती है।

स्वभावतः ही इस प्रकार गति करते हुए अणु एक दूसरे से धक्का भी डककते रहते हैं। इस प्रकार की टक्करें एक निम्न से लाखों करोड़ों हो सकती हैं। टक्करों के जाने अणु अन्तर पीछे हट जाते हैं और उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। कभी कभी उनमें कुछ परिवर्तन भी होता है। टक्करों के जाने अणुओं में कभी कभी उनके एक या दो नए अणु पैदा हो सकते हैं या जिन अणु या जिन अणुओं से बने



टकराते हैं उनसे कुछ परमाणु ले या उनसे दे सकते हैं। इन्होंने माने प्रत्युपापस में चिरक भी सकते हैं और नये ठना नये प्रत्यु बना सकते हैं।

आयन (Ions) — अपनी आपसी टक्करों में किसी प्रत्यु का एक परमाणु अपने इलेक्ट्रान को लुप्तता है। उदाहरण के लिये हम परमाणु संख्या ११ को लेते हैं जिसमें सामान्यतः ११ ही इलेक्ट्रान होते हैं। यह तत्व सोडियम (Sodium) है। यह एक सक्रिय प्रत्यु है और इस कारण इसके परमाणु दूसरे तत्वों के परमाणुओं से संयुक्त होकर हमारी दुनिया की अनेक वस्तुएँ बनाते हैं, जैसे क्लोरीन तत्व के एक परमाणु के साथ संयुक्त होकर इस सोडियम प्रत्यु का एक परमाणु सोडियम क्लोराइड का एक अणु बन जाता है। यह सोडियम क्लोराइड ही हमारे अतिरिक्त जाने का नामक है।

यद्यपि एक सोडियम परमाणु किसी दूसरे प्रकार के परमाणु से टकराता है तब सोडियम का यह परमाणु कभी कभी अपना एक इलेक्ट्रान को देता है। जैसा कि हम धारणा करते हैं इस परमाणु की बल्लियों पर ११ इलेक्ट्रान होते हैं जो बल्ले के केन्द्र में स्थित ११ प्रोटोनों द्वारा संयुक्त रहते हुए इस परमाणु को निरुपेक्ष, और बिजली आवेश (Electric charge) से हीन बनाये रखते हैं। परन्तु प्रकृति में एक इलेक्ट्रान के लो रिये जाने पर इसमें ठन केवल १० ही बल्लिय इलेक्ट्रान रह जाते हैं। यद्यपि यह परमाणु तटस्थ नहीं रह पाता; क्योंकि इसके केन्द्र में कहीं एक बिजली के ११ प्रोटोन हैं वही उसकी बल्लियों पर अब केवल आवेश-बिजली के १० ही इलेक्ट्रान रह गये हैं। इस धारणा के १ इलेक्ट्रानों का कुल बिजली आवेश

(Electric charge)~ १० हो जाता है जब कि परमाणु के केन्द्र में ११ प्रोटोनों का कुल आवेश  $+11$  होता है। इस प्रकार सब मिश्रकर उस परमाणु का कुल आवेश  $+1$  हो जाता है। यह सब धन आवेश (Positive charge) का परमाणु जब जाता है।

एक अवस्थित धर्म होते हैं। तब १७ क्लोरीन है जो एक हरी धर्म जहरीली सक्रिय वस्तु है। इस वस्तु के परमाणु हाइड्रोजन, कार्बोक्सीन व नाइट्रोजन के परमाणुओं की तरह जोड़े बनाते हैं। जब एक क्लोरीन धर्म दूसरे किसी तत्व के धर्म या परमाणु से टकराता है तब उस क्लोरीन धर्म का एक परमाणु कभी कभी उस दूसरे तत्व के परमाणु से एक अधिक इलेक्ट्रॉन ग्रहण कर लेता है और उसे लेते ही बनने पड़ता है। क्लोरीन परमाणु में जब एक इलेक्ट्रॉन के लोप जाने पर १५ इलेक्ट्रॉन हो जाते हैं जिसका कुल आवेश  $-1$  हो जाता है। परमाणु केन्द्र में भी तब भी १७ ही प्रोटॉन होते हैं जिसका कुल आवेश  $+17$  होता है। इस प्रकार उस क्लोरीन परमाणु का कुल आवेश  $-1$  हो जाता है।

यदि परिस्थितियाँ ठीक हों तो कभी सक्रिय तत्वों के परमाणु एक या अधिक इलेक्ट्रॉन छोड़ते या ग्रहण करते रहते हैं। फलस्वरूप कभी कभी धर्मों में इलेक्ट्रॉनों की संख्या सामान्य है कभी या अधिक हो सकती है। इस प्रकार के परमाणु या धर्म (कभी कभी परमाणु समूह या धर्म-समूह भी) तटस्थ नहीं होते। उन पर या तो धन आवेश (Positive charge) होता है यदि इलेक्ट्रॉन निराल जायें या ऋण धर्म धर्म आवेश (Negative charge) होता है यदि उनमें एक अधिक इलेक्ट्रॉन या जायें।

ये आवेश-पुल परमाणु या अणु किसी विद्युत्-धारा (Electric current) के साथ इलेक्ट्रॉनों की तरह ही अनुकूल परिस्थितियाँ हों तो जा सकते हैं। अणु-विद्युत् के परमाणु या अणु इलेक्ट्रॉनों की ही रिखा में जाते हैं और धन-विद्युत् के परमाणु या अणु धनविद्युत् रिखा में जाते हैं।

योंकि ये आवेश-पुल परमाणु या अणु विद्युत्-धारा की उपस्थिति में ही क्रियाशील होते हैं इसलिये इन्हें "आयन" (Ions) कहते हैं। "आयन" शब्द ग्रीक भाषा का है जिसका अर्थ "जाना" होता है। अपने आवेशों के अनुसार यह "अणु आयन" या "धन आयन" कहलाते हैं।

रेडियो सक्रियता या विकिरण (Radio-activity) :- किसी भी एक परमाणु के केन्द्र में जब दो या दो से अधिक प्रोटॉन होते हैं तो उन्हें केन्द्र में एक साथ बाँधे रखने के लिये न्यूट्रॉन (Neutrons) होने आवश्यक है। प्रोटॉन एक धन-विद्युत् (Positive electricity) के ही अणु होते हैं और योंकि विस्तृत एक जैसे विद्युत् आवेश के अणु एक दूसरे से दूर जाते हैं इसलिये उन्हें जोर-जबर-दस्ती एक साथ बाँधे रखने की विद्युत् आवेश से विस्तृत होने न्यूट्रॉनों की होना जरूरी होता है। जब केन्द्रीय प्रोटॉनों की संख्या थोड़ी होती है तब न्यूट्रॉनों की उतनी ही संख्या उस केन्द्र को बचायी बनाये रखने में पर्याप्त होती है। हीलियम-४ (तत्त्व संख्या २) के केन्द्र में २ प्रोटॉन और २ न्यूट्रॉन होते हैं। बर्बर-१२ (तत्त्व संख्या ६) के केन्द्र में ६ प्रोटॉन और ६ न्यूट्रॉन होते हैं। कार्बोनीयम-१२ (तत्त्व संख्या ८) के केन्द्र में ८ प्रोटॉन और ८ न्यूट्रॉन एवं बीसीयम

तत्व, प्रत्य और परमाणु

(Neon)- २० (तत्व संख्या १०) के केन्द्र में १० प्रोटान और १० न्यूट्रान होते हैं।

सैलिन यह स्थिति केर तक नहीं रहती। जब किसी परमाणु केन्द्र में २० से अधिक प्रोटान होते हैं तब न्यूट्रानों की जतनी ही संख्या उस केन्द्र की स्थायी बनाये रखने के लिये पर्याप्त नहीं होती। कुछ अधिक न्यूट्रानों की जरूरत होती है। उदाहरण के लिये सोहो के बनाने के लिये २६ प्रोटान होते हैं सैलिन सोहो का स्थायी केन्द्र कम २८ न्यूट्रान चाहिये- अर्थात् २ न्यूट्रान अधिक। २९ प्रोटान के केन्द्र वाले तमि के परमाणु को स्थायी बनाने के लिये कम से कम १४ न्यूट्रान चाहिये। तिन के परमाणु के लिये जिसके केन्द्र में १० प्रोटान होते हैं, १२ न्यूट्रान चाहिये।

आये बहने पर और भी अधिक न्यूट्रानों की जरूरत हो जाती है। सबसे भारी स्थायी सीसा धातु के एक परमाणु के केन्द्र में ८२ प्रोटान होते हैं। इस भारी संख्या की स्थायी रखने के लिये १२९, १२४, १२३ या १२६ न्यूट्रान होते हैं। न्यूट्रानों की इन भारी संख्याओं के कारण निम्न निम्न बार प्रकार के धातु भार वाले सीसा धातु के ४ सहोवर (Isotopes) बनते हैं।

जिसी परमाणु-केन्द्र में जब प्रोटानों की संख्या ८२ से अधिक होती है तब धारा फटन ही दूर जाता है। ८२ से अधिक प्रोटानों के केन्द्र वाले किसी भी तत्व का परमाणु कभी भी स्थायी नहीं होया जाये जिसने ही न्यूट्रान क्यों न जोड़ दिये जायें। फिरभी ८२ से अधिक प्रोटान वाले परमाणुओं का अस्तित्व है। यूरेनियम के

परमाणु संख्या ६२ है। इसका सबसे अधिक परिचित सहोदर घूरे नियम-२३८ है। इसके केन्द्र में ६२ प्रोटॉन और १४६ न्यूट्रॉन होते हैं यानी १४ अधिक न्यूट्रॉन।

इन सब न्यूट्रॉनों के बावजूब घूरेनियम-२३८ स्थायी नहीं है। इसके परमाणु घटपायी तो जरूर हैं लेकिन एकाग्र नहीं करते। घटने की यह प्रक्रिया कुछ व्यवस्थित रूप से होती है। इसके परमाणु का घटपायी केन्द्र केवल एक या दो उप-परमाणु कण चेंक देता है। घूरेनियम परमाणुओं की किसी भी मात्रा में, हरकण एतिष्य संख्या बढ़ती रहती है या घटती रहती है या हर बिछा में छितरती रहती है। इस प्रक्रिया को विकिरण (Radiation) कहते हैं। सन् १८९६ ई० में एक फ्रांसीसी वैज्ञानिक बेकरल ने सर्व-प्रथम इसका पता लगाया था। वैज्ञानिकों ने जब इस विकिरण पर चुम्बक का प्रभाव देखा तो उन्हें तीन प्रकार के विकिरणों का पता लगा। इस विकिरण में निचले वाली एक प्रकार की किरणों का मार्ग चुम्बक के प्रभाव से थोड़ा मुड़ गया था। दूसरी प्रकार की किरणों का मार्ग पहिले प्रकार की किरणों के मार्ग के विपरीत मुड़ गया। तीसरी प्रकार की किरणों पर चुम्बक का कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

बहुते प्रकार की किरणों को एल्फा किरण (Alpha rays) कहा गया। दूसरे प्रकार की किरणों की बीटा किरण (Beta rays) और तीसरी को गामा किरण (Gamma rays) कहा गया। आगे चलकर जब यह देखा गया कि एल्फा किरणों और बीटा किरणों में उप-परमाणु कण होते हैं तो उन्हें एल्फा कणों की बीटार कहा जाने लगा। बीटा कण की पहिचान सन् १९००

तब घोर और परमात्मा

में हुई। इसको देख पति करता हुआ इलेक्ट्रान ही बाया गया।  
 अब हम कह सकते हैं कि प्रोटान, इलेक्ट्रान और न्यूट्रान तीनों ही इस बिज पड़ने वाले जपत् की तब से छोटी चीजें हैं जिनका अस्तित्व हमें ज्ञात हो चुका है। इस विज्ञान बिज की सभी छोटी चीजें इन तीन प्रकार के कणों, और केवल इन्हीं तीनों से बनी हैं। इन तीनों के मिलन से परमाणु बनते हैं और परमाणुओं के एक साथ मिलने से धातु बनते हैं और धातुओं से तब बनते हैं। इन कणों को तरह तरह से इकट्ठा कर के लकड़ी, काँच बरतड़ा पानी एवं हमारे घरीरों की हड्डियाँ नून और नाँसलेटियाँ बनी हुई हैं।

जैसे ही प्राकृतिक ताबों की संख्या १२ है पर हमारी दुनियाँ में अधिकतर वस्तुओं का अधिकतर समय १४ ताबों से बना हुआ है जिनमें हाइड्रोजन कार्बोड्रोजन आयनीजन और बलोरिन यत्तें और कार्बन सोडियम मैग्नीशियम ऐलुमिनियम, सिलिकान, फास्फोरम पायक, पोटेसियम और सोडु— ये ठीक तब शामिल हैं।

अब तो यही ज्ञात है कि इलेक्ट्रान प्रोटान और न्यूट्रान— ये तीनों कण ही मिलकर तारों यहीं और हमारी दुम्बी के इस विद्याल बिज के निर्माण का धारण करते हैं परन्तु तब तो यह है कि न्यूट्रान-विद्युत् के आवेश वाला (Negatively charged) इलेक्ट्रान ही इस काम को करने में तारी बीड़ पूर करता है। सभी परमाणुओं को सबसे बाहर की कलाओं पर निरन्तर घूमने वाले इलेक्ट्रान ही चलते चलते एक दूसरे के यत्तों में घसने हाथ डालकर युगलित जाते हैं और इस प्रकार येतबान के घसने सेबों को बड़ाते

घसफो सब मिर्चीय कहने लगते हैं। जीवन कोई मूर्त वस्तु नहीं है। इसका न तो कुछ भार ही होता है और न इसके कोई प्राधान (सम्पाई जीवार्थ इत्यादि) ही होते हैं। परन्तु होता है यह शक्ति-मान; इसमें प्रबल शक्ति होती है। बिघी भी पीने की उमती हुई बड़ बटून को भी तोड़ फोड़ कर उसके भीतर घुस जाती है। जीवन ने अपनी इसी शक्ति के बल पर जल खल और वायु पर विजय पाई है।

यद्यपि हम जीवन को उसके अपने किसी भी मूर्त एवं रूप रूप में देख तो नहीं पाते फिर भी बिजली के धावनों के कुछ इलेक्ट्रानों और प्रोटानों तथा बिजली के धावनों से रहित गण्डुलों के धारित संघातों के जल घाने जिन जिन कर्मों में होकर यह जनस्वतियों और मनुष्य प्राणियों के माध्यम से अपनी अधिष्पति देता है उन्हें अब हमने जभी शक्ति मान लिया है। कार्बन, ओस्फोरस और नाइट्रोजन जैसे तत्वों के कुछ रेडियो-सक्रिय परमाणु स्वायी सहोदरों (Isotopes), जिन्हें अन्वेषक तत्व (Tracer-elements) कहते हैं, की मदद से हमने शरीर के कोषाणुओं में होने वाली आन्तरिक चल-चलों का पता लगा लिया है। शरीर-विज्ञान की इन चीजों में विद्युत्-संचालित घट्टा-सेन्ट्रोफ्यूजों (Ultra-centrifuges) और हलरे गये और सूक्ष्मबाही उपकरणों से भी काफी मदद मिली है। इनमें "एक्स रे डिफ्रैक्शन" (X-ray diffraction) और इलेक्ट्रान माइक्रो-स्कोप (Electron microscope) भी प्रमुख हैं। इन साधनों के बल पर आज हम जान गये हैं कि हमारे शरीर के कोषाणुओं (Cells) की बनाने वाले घटक क्या हैं; जैसे कि परमाणु, अमीनो अम्ल

(Inorganic ions), जल के घुलु रायिनो-एसिड, लोह (Fats) शर्करा (Sugars) और प्रोटीन। इन सबे सामग्री में हमें यह भी बतना दिया है कि एन्जाइम (Enzymes) पाचक रस) रहे जाने वाले कुछ सूक्ष्म द्रव्यों के द्वारा परस्पर संयुक्त की गईं कुछ रासायनिक प्रतिक्रियाओं की एक विस्तृत श्रृंखला या श्रृंखला की ही हम जीवन कहते हैं। जीवन की प्रतिक्रियाओं को हमें क्या कहेंगे की जटिल प्रक्रियाओं में एक दूसरी से सम्बन्धित अनेक रासायनिक प्रतिक्रियाओं की एक विस्तृत श्रृंखला होती है। किसी भी एक कोषाणु की विपरीत (Metabolic) प्रक्रिया को समझ बनाने के लिये हजारों प्रकार के पाचक रसों (Enzymes) की आवश्यकता होती है।

अभीष्ट रहे जाने वाले द्रव्य से जीवन की वास्तविक उत्पत्ति कैसे होती है इस बात को समझने के पहिले हमें हमारी धृम्भी पर जीवन की सर्व प्रथम उत्पत्ति और स्थापन होने के समय वन (धृम्भी) पर क्या अवस्थाएँ थी यह ज्ञान सेना अज्ज्ञ होना।

कैम्ब्रियन युग (Cambrian period) से बहुत पहिले, आज से लगभग २ अरब वर्ष पहिले हमारी धृम्भी की ऊपरी छोर, जिस पर हम रहते और चलते फिरते हैं बन रही थी। कुछ प्राकृतिक घटनाएँ ऐसी घटी कि धृम्भी के भीतर की वैसे और पानी की भाव वन (धृम्भी) के भीतरी भाग से निकल कर उसकी सतह पर बनी आई। धीरे धीरे लाखों वर्षों के बीतान में, पानी की यह भाव घनीभूत होकर नदियों, नालों और समुद्रों के रूप में बहने लगी।



धीरे धनराधर बना देता है ।

कहते हैं कि राजा सोमेश्वर, श्रीविम्ब मन्वन्तराधरार्ज्य श्रीविन्म  
नायक कर्पटीनायक कपिल व्यासि कपासि, कान्तनायक गोरक्षनाय,  
नाबाहुनायक, छालिनायक, मोक्ष मोक्षीनायक इत्यादि अनेक ऐतिहासिक  
मुख्य इस रस के प्रयोग से श्रीवन्मुक्त धीरे धनराधर होयते हैं ।  
धनी कुछ ही वर्ष हुए, जयपुर (राजस्थान) की ओर एक छात्र ने  
अनेक कर्मों के बाद अष्टमे धेनने का अन्तिम बारह वर्ष का कर्म  
कर रससिद्धि प्राप्त की थी । कहा जाता है कि इस सिद्धि के बाद  
उन छात्र का शरीर हनुमानजी के शरीर की तरह सुदृढ़ हो गया था,  
लेकिन वे अपने इस शरीर का इसके फल की तरह उपयोग कर सकते  
थे । एक दिन यह अपने अन्तः से पापक ह्रीकर जैसे नये धीरे  
अनुमानतः अब हिमालय पर ही नहीं हैं ।

रतेधर अम्बरधर तथा श्रीविन्म धीरे धनराधर नाथों धीरे श्रीविन्मों  
की लक्ष्मी धनराधर हो जाने वाली सिद्धि की बात पर भले ही कोई विस्मात  
न करे फिर भी यह तो एक तथ्य है कि पारे धीरे धनराधर जैसे तत्त्व  
अपने अनेक आध्यात्मिक शक्तियों के कारण कार्यन की अपेक्षा, जिससे  
हमारे वर्तमान शरीर जैसे हुए हैं, अधिक दृढ़ धीरे स्वाधी आध्यात्मिक  
शक्तियों के तत्त्व हैं धीरे इस कारण बहुत कुछ सम्भव है कि इन तत्त्वों  
का शरीर में बरापा गया प्रवेद्य उस शरीर की कार्यन की अपेक्षा  
अधिक स्वाध्यात्मिक हो वे ही शक्तता है ।

पारा एक तत्त्व है जिसका तात्त्विकी धन-सात्विका में ८० भा  
स्वात है । इसका मतलब यह हुआ कि इसके एक परमाणु के केन्द्र में  
८ प्रीदान-कण धीरे १२० प्रमाण कण हैं । इसके केन्द्र के चारों

भौतिक शरीर को ध्वस्त बनाने की ओर मनुष्य के कुछ प्रयोग १४८  
 ओर ८० इलेक्ट्रान बना अपनी अपनी 'दिनों' में घूमते हैं। इसका  
 धरा-भार २००० है। इसका घनत्व भी १४-४८ है।

अपनी लक्ष्य से बाहर की जगह पर इलेक्ट्रानों की "समृद्धि संख्या" (Saturation number) न होने के कारण यह तत्व धातुकीयन जैसे बृहत्ते कुछ तत्वों के साथ अपना संयोग कर लेता है, यद्यपि इसकी संयोग-शक्ति अधिक प्रबल नहीं होती। किसी तत्व के साथ एक बार मिल जाने पर वारा कुछ स्थायी संयुक्त रूप बना लेता है।

सोडियम और पोटेशियम से मिल कर वारा "सोडियम एमल-गम" बनाना है और इस प्रक्रिया में काफी ऊष्मा, गर्मी या शक्ति उत्पन्न करता है। मैग्नीशियम के साथ मिलकर वह "मैग्नीशियम एमलम" बनाना है। स्मरण रखना चाहिये कि सोडियम, पोटेशियम और मैग्नीशियम तीनों ही हमारे शरीर में वर्तमान महत्वपूर्ण तत्व हैं। एलिमेंटों के सम्पर्क में धातु भी पाछा काफी स्थायी बना रहता है। हमारे शरीर में एलिमेंट ही जलमें वर्तमान तत्वों को घुसा कर उनका लय करते रहने हैं। एलिमेंट से अप्रत्यक्ष रूप से के कारण वारा शरीर को दीर्घ-कालीन स्थायित्व देना है। धातुकीयन के साथ मिलकर वारा की तरह के "मोलिब्डेन" बनाना है जो  $Hg_2O$  और  $HgO$  (यहाँ Hg का घनत्व है वारा और  $O$  का घनत्व है धातुकीयन)। कहिये मोलिब्डेन की मनु रस मोलिब्डेन और हमारे की "मनु रिक मोलिब्डेन" कहने हैं।

बसोरोन वैन (यह भी हमारे शरीर का एक तत्व है) के साथ वारे की धर्म करने पर "मनु रिक बसोरोन" बनता है। यह एक

तीव्र विष है और एम्बी-सेप्टिक है। इसलिये शरीर में, यदि मौजूद हो तो उन बीजाणुओं को दबाने वहाँ होता जो शरीर को जोखना बनाकर घमरी घुत्तु का कारण बनते हैं। मनु रिच एलोराइड के बीज ही आयन (Ions) भी नहीं बनते। इसका मतलब हुआ कि इसके इलेक्ट्रान और प्रोटान कणों के घटन स्थिर बने रहते हैं।

अब हम घमर के तार्मिक घटन और हमारे शरीर को फिर रक्षा की बचावे के लिये उसकी कण्योक्ति पर कुछ प्रकाश डालेंगे। घमर, स्वयं अपने कण में एक लव नहीं है परन्तु यह अनेक तत्वों के मिश्रण से बना हुआ द्रव्य है। इसमें मुख्यतः सोडियम, मग्नीशियम और सिलिका है। इसका आणविक सूत्र  $KH_2 Al_2 (SiO_3)_3$  है। इसका यह मतलब हुआ कि घमर के किली एक घण्टा में सोडियम का एक परमाणु, हाइड्रोजन के दो परमाणु, मग्नीशियम के तीन परमाणु और सिलिका या सिलिकन के तीन परमाणु होते हैं। यह सब सब अपने अपने कणों में वीं संगठित नहीं हो सकते इसलिये घमर है। एक घमर को गठित करने के लिये वह सब सोडियम के साथ मिलकर पहिले तो अपने 'प्रोक्साइड' बनाते हैं और फिर सब उनकी वह प्रोक्साइड ही, अपने प्रोक्सीजन परमाणुओं के माध्यम से घमर के घटन के कण में मिला हो जाती है। घमर के घण्टा का प्रतिशत विनियोग है:—

|                   |            |               |
|-------------------|------------|---------------|
| सिलिकन            | प्रोक्साइड | ४१.७१ प्रतिशत |
| मग्नीशियम         | प्रोक्साइड | ३९.१७ प्रतिशत |
| (नोट वी) कैल्शियम | प्रोक्साइड | १९.१ प्रतिशत  |
| केरत              | प्रोक्साइड | १.०३ प्रतिशत  |

भौतिक शरीर को समर बनाने की और मनुष्य के कुछ प्रयोग १३१

पोटाशियम धोक्साइड

८.९२ प्रतिशत

सोडी

४.८३ प्रतिशत

इन धोक्साइडों और सोडी के साथ इस बठन में कुछ कुछ प्रांश लीथियम धोक्साइड, मैग्नीशियम और कल्शियम धोक्साइड के भी होते हैं।

यहाँ पर एक बार फिर हम याद दिला देना चाहते हैं कि जैसा हम पहिले अनेक बार लिख आये हैं, हमारे शरीर के वर्तमान ढाँच में पोटाशियम, मनुषीनियम, हाइड्रोजन, आक्सीजन तोहा इत्यादि तत्व तो हैं ही केवल उसके मूल आधार के इन ॥ कार्बन हैं जो इस ढाँच का ४३ प्रतिशत है। शरीर को समर बनाने के लिये इन तत्वों ने अनेक और वारे का जो योग रक्ताया है उसको क्रिया-शक्ति करने में अनेक का सेवन या नकारण कर हम बेबल इतना ही करेंगे कि शरीर के ढाँच में कार्बन की अपरु सिलिकन को बँटावें। यह सिलिकन भी तब उस समर शरीर में कार्बन की तरह ही ४३ प्रतिशत होया।

तत्वों की कम-सालिखा में सिलिकन का १४ वाँ स्थान है। इसके केन्द्र में १४ प्रोटान-कण और १४ न्यूट्रान-कण होते हैं। उस केन्द्र के चारों ओर १४ इलेक्ट्रान घूमते रहते हैं। कार्बन और सिलिकन दोनों एक ही वर्ग (Fourth group) के तत्व हैं। यह दोनों ही अधातु (Nonmetals) तत्व हैं। कार्बन के चार इलेक्ट्रानों की तरह सिलिकन भी अपनी आखिरी बला पर घूमने वाले ४ इलेक्ट्रान कणों की दूसरे तत्वों के बरमावट—इलेक्ट्रानों से संयोग करने को हमेशा तैयार रहता है। इस प्रकार कार्बन और

सिलिकन दोनों एक दूसरे से बहुत अधिक समानता रखते हैं। और जहाँ में एक समान होते हुए भी उन दोनों में एक बहुत बड़ा फर्क है जो दोनों को जो अलग दोनों में बाँट देता है। कार्बन एक ऐसा तत्व है जो बड़ी आसानी से ठूँस फूँस और बिसर सकता है जब कि सिलिकन अधिक स्थायी और सुई पकन का तत्व है। सभी जानवरों और वनस्पतियों का मूल और अभिचार्य घटक जहाँ कार्बन है वहीं पौधों का मूल और अभिचार्य घटक सिलिकन है। सिलिकन के ही बड़े बड़े धातुओं के लक्षणों या लक्षणों से दुनिया की सभी जड़ों और पहाड़ आदि बने हैं।

आपने शरीरों के मूल-आधार तत्व कार्बन के अनुसंधान ही अनुसंधान आदि प्रारंभ जहाँ कुछ छोटे से क्यों तक ही अपना अस्तित्व बनाये रख सकते हैं वहीं सिलिकन के मूल आधार पर बने हुए पहाड़ आदि हजारों लाखों क्यों तक क्यों और मूल सहते हुए क्यों के त्यों बने रहते हैं। कोई अचरम की बात नहीं यदि पारे और अम्ल के योग से अनुसंधान के शरीर के कोषाणुओं में सिलिकन अणुओं का प्रवेश करा दिया जाय तो वह शरीर हजारों और लाखों क्यों तक पहाड़ों की तरह ही बिर-मुखा और अमर बना रहेगा। अनुसंधान के शरीर की कार्बन से मिलकर तब अचरम की यह सिलिकन सिलिकन कार्बाइड Silicon Carbide (SiC) बनविधि।

यह कार्बाइड बहुत अधिक सक्त होगा। इसको “नाथोएन” नाम भी दिया गया है। यह इतना मजबूत होगा कि बहुत ही ऊँचे तापमान पर भी आक्सीजन इस पर कोई असर न कर सकेगी। कोई भी एलिमेंट इस पर अपना असर नहीं कर सकेगा।

भौतिक शरीर को समर बनाने की ओर मनुष्य के कुछ प्रयोग १२३

जिन प्रकार कार्बन के परमाणु हाईड्रोजन और ऑक्सीजन के परमाणुओं से मिलकर कार्बोहाइड्रेट्स बनाकर मनुष्य मांसी स्नायु का आरम्भ करते हैं वैसे ही सिलिकन भी ऑक्सीजन के परमाणुओं के साथ 'सिलिको कार्बोहाइड्रेट्स' (Silico-carbohydrates) बनाकर मनुष्य शरीर को चमक और समर बना दिया।

भारतीय आयुर्वेद के प्रवर्तक ऋषियों ने बहुत पहिले सारे और चमक के इन अद्भुत गुणों का साक्षात्कार कर लिया था। इनोसिये उन्होंने संघली याहि घातक रोगों से जीर्ण दीर्घ हुए रोगियों की चिकित्सा के लिये सारे के योग से बनी हुई 'अपशि' औषधि का विधान दिया था। आज भी हम साये दिन आयुर्वेदिक चिकित्सकों को वर्षों के प्रयोग से अनेक घृत-सुख्य रोगियों की भीरोम स्वस्थ और हृष्टपुष्ट बनाते हुए अत्यन्त देखते हैं। इसी प्रकार कान्नी और राजपहमा जैसे घातक रोगों का अत्यन्त अल्प द्वारा आयुर्वेद उपचार होते हुए देखते हैं।

विज्ञान की आरम्भ अनेक प्रवृत्ति के कारण आज हम कुछ पादचान्य चिकित्सकों को भी इस विद्या में प्रयास करते देखते हैं। बुझाये को दूर कर मनुष्य को हमेशा अज्ञान बनाये रखने के कुछ बोड़े से आरम्भिक प्रयोग अभी हाल में ७० वर्षों के आ. पी. ए. ए. के लिये हैं। यह सिद्धाचार्य के निधानी हैं। अस्तोम्युन ग्रन्थियों (Glands) और बुझाये के कारण होने वाले रोगों का इलाज करने के लिये आ. मेन्टल के कुछ इन्जेक्शन ईलाज दिये हैं। उनकी चिकित्सा ऋषि को मेसुजर थेरापी (Cellular therapy) का नाम दिया गया है। ईगाई-जयन् के पिछले वर्ष गुड और प्रतिष्ठ

लेफ्ट सोमरसेट मौम जर्मनी के डा० ऐडेगोर घीर प्रतिष्ठ  
असिनेत्री ग्लोरिया स्वाम्भन में डा० मेस्हन्स के इन्जेनरन लिये थे ।

डा मेस्हन्स के यह प्रयोग सभी अपनी जिन्नु-प्रवस्था में ही हैं ।  
इसलिये उनका कहना है कि उनके यह इन्जेनरन युवावस्था को तो  
सभी तक बाधित नहीं लौटा पति परन्तु वह युवावस्था की शारीरिक  
बेहार्मों को तो बाधित ला सकते हैं । इस चिरित्ता में डा० मेस्हन्स  
कुछ जीवित कोवालुओं के इन्जेनरन बैसे हैं ।

कुछ जुने हुए जानवरों के अंगों से जीवित कोवालु प्रलय  
निराल लिये जाते हैं । उन कोवालुओं को समयसम २४ घण्टों तक  
एक उपयुक्त द्रव में जीवित रक्खा जा सकता है । परन्तु डा० मेस्हन्स  
उस जानवर के अंगों से उन कोवालुओं को निकालने के एक मा हो  
घण्टे के भीतर ही उनका इन्जेनरन देना शनिक सामवायक मानते हैं ।  
बीमार के जिन अंगों को नया जीवन देना होता है, जानवर के उन्हीं  
अंगों से यह कोवालु लिये जाते हैं । यह इन्जेनरन न केवल उन्हीं  
को दिये जाते हैं जो बूढ़े हो रहे हैं, अपितु उन आकडर का तो यहाँ  
तक दावा है कि किसी भी एक सुन्दर युवनी को यदि यह इन्जेनरन  
लगा दिये जाय तो उसकी युवावस्था और लौम्हर्ष को धमैक बनों तक  
सुरक्षित रक्खा जा सकेगा ।

अत्येक इन्जेनरन का प्रभाव प्रायः १० वर्षों तक रहेगा ।  
साक्षियत सङ्ग की चिरित्ता बिज्ञान धरास्फी की प्रयोक्ताला के  
प्रोटेसर बी ए. मैगोष्की घीर उनके सहचारियों ने मरे हुए  
घारकी की फिर से जिता देने की बिदा में कुछ प्रयोग किये हैं ।  
हृदय की गति एक जाने और सात अम्ब हो जाने के १-५ मिनट

भौतिक शरीर की टांग बनाने की धीरे मनुष्य के कुछ प्रयत्न १२।  
 आरंभ तक वह धीरे धीरे धारणी की विज्ञान जाने में सम्मिलित हुए हैं।  
 उस समय तक शरीर में अकारणन की विज्ञान जारी रखी है।  
 यद्यपि उसकी रचना की भी अकारणन पड़ जाती है धीरे अस्तित्व की  
 जीवाश्मों का काम तब तक आरंभ नहीं होता। पुरुषों की विज्ञान के  
 लिये धर्मियों के रास्ते उसके शरीर में नून पहुँचाया जाता है।  
 कुत्रिन् कम से उसे लीज निभाई जाती है। इतिवृत्त की माता की  
 जाती है धीरे धीरे हृदय की वेदिका। लीज से काम करना बाद कर  
 देनी है तो विज्ञानी के एक पद की कक्षापता से हृदय की विज्ञान को  
 पलेजित निभा जाता है।

मनुष्य आज और आकाश में वही धीरे धीरे तक पहुँच कर  
 वापिस लौट जाने के दम्भूते लीज रहा है। बहुत सम्भव है कि  
 मनुष्य में कितने एक दिन वह ऐसा करने में सफल हो जाय। यदि  
 कभी ऐसा हो सके धीरे मनुष्य पक्षों और शरीरों की आकाशों पर  
 जाने जाने गया तो पुरुषों धीरे मनुष्य की अस्तित्व का एक धीरे अस्तित्व  
 अस्तित्व उनके हाथ जन जायेगा। आइन्सटीन के प्रसिद्ध "सापेक्ष  
 वाद" का एक निष्कर्ष यह कहता है कि यदि विस्तृत एक जैसी दो  
 घड़ियों की हय एक ही जगह एक निश्चित समय पर जानू करे धीरे  
 यदि उन दोनों में से एक घड़ी को जानू हासत में आसत ऊँचे  
 से पक्ष करनेवाले एक रॉकेट-यान पर ऊपर आकाश में जाया पर  
 निजरे धीरे दूसरी घड़ी की जगह हासत में वहीं रखें तो जब वह  
 आकाश पर गई हुई घड़ी नीचे कर पृथ्वी पर वापिस जायेगी तो हम  
 देखेंगे कि हमारे पास यहाँ रखी हुई घड़ी में तब तक की कुल  
 समय बीता है उसका आकाश समय ही उस आकाश के लोटी हुई घड़ी



में बोझा हुआ होना। यदि यात्रा करते समय उस धड़ी में प्रचण्ड की गति के दूँ माप की गति से यात्रा की होगी तो घुम्बी पर रखी हुई धड़ी में रिसाये गये बीजे हुए प्रत्येक एक छोटे की कनह यात्रा से भीड़ी हुई वह धड़ी कैदना यात्रा घटा है। बीजा हुआ रिक्तताये। यह बात उस प्रत्येक बीज पर लागू होगी की समय की माप रखती हो जो समय के साथ ही घाये चलती या बसती हो समय के साथ इस करने की हो रूप उस कहते हैं। निश्चय ही हमारा शरीर की ऐसी ही एक नाम मात्रक वस्तु है।

यात्रा तक हम प्रकाश के क्षेत्र की ही गति की पराकाष्ठा मानते हैं। यदि कोई पान प्रकाश क्षेत्र से भी अधिक क्षेत्र से गति करे तो उसमें बैठे हुए यात्री कीरे पीरे उस में छोटे और अधिक छोटे होते जाने जायेंगे और लम्बावना तो यह है कि जब कभी वह वापिस घुम्बी पर लौटेंगे तब अपने आपको अपने जन्म के समय से कुछ वर्ष पहिले ही घुम्बी पर सप्रतीर लौटे हुए पायेंगे। ब्रह्माण्ड का यह एक अनोखा रहस्य है। प्रकृति का एक ऐसा कारणनाम जो हमारी सहज सुझ बुझ और समझ से बरे की चीज है।

निश्चय ही जब कभी ऐसा सम्भव हो सकेगा तब हम अपनी ९० वर्ष की अवस्था में देखें ही एक घण्ट में बैठकर जो प्रचण्ड की गति (गति सेकण्ड १८६,००० मील) से भी अधिक तेज गति (पान सीक्रेट ८१ ००० मील प्रति सेकण्ड) से सपाटे चलता होना। सुदूर यात्रा में एक तारे की यात्रा पर निकल बड़ेने और हमारे अपने बाल-माल के अनुसार कुछ वर्ष बहरी घों घूमते हुए ही बिताकर जब वापिस घुम्बी पर लौटेंगे तो देखेंगे कि युवा होने की तो बात ही क्या

भौतिक शरीर को समर बनाने की ओर मनुष्य के कुछ प्रयोग १५७  
उस समय तक तो हम माँ के पेट में ही नहीं पहुँचे हैं। हम जिसे एक  
तथ्य मानते हैं — वास्तव में घटी हुई एक जड़ना मानते हैं, उसे ही  
यों छटना देने वाली प्रकृति और भुलना देने वाले काल की महिमा  
अप्रमेय है।

यह बात गिरी लप न होकर घाले वाले प्रविध्य की एक  
वैज्ञानिक द्वारा भी गई भूलक है। इंग्लैण्ड में प्रमुख मेडीकल जर्नल  
'लान्सेट' (Lancet) के अगस्त १९२६ ई० के अंक में प्रकाशित  
एक वैज्ञानिक की राय है।

वास्तव में काल ही शक्ति का स्रोत और जनक है। जिस  
प्रकार जल बेग से बहता हुआ नदी का जल शक्ति और बालक जल  
चपल करता है ठीक वैसे ही प्रचण्ड गति से भागता हुआ काल भी  
करता है। मेनिनग्राड (रूस) के निरुद्ध पुलकोवो विश्वविद्यालय के प्रोफेसर  
निकोलाई कोजीरेव (Nikolai Kozirev) ने इस सिद्धान्त का  
विकास दिया है। काल के जहाज से उत्पन्न होने वाली शक्ति की  
माप की सबसे छोटी इकाई है काल का वह भाग जिसमें एक कारण  
विकसित और परिवर्तित होकर कार्य बन जाता है। प्रो० कोजीरेव  
ने इस इकाई का नाम प्रति सेकण्ड सपमय ७ • कीलोबोडर माना है।

हमारे जन्म और मृत्यु का निषामककाल ही है। काल के  
जित नाप से हम शास्त्रित हो रहे हैं वह प्रति सेकण्ड १८६००० बील  
(प्रकाश की गति) है। इस गति से अधिक तीव्र गति हमारे जन्म  
और मृत्यु की काल-व्यवस्था की बहुत पीछे छोड़ जाती है। इसी  
कारण प्रति २५०००० बील प्रति सेकण्ड की गति से यात्रा करने  
वाले व्यक्ति, एक निश्चित अवधि तक यात्रा कर बुझने पर, जब

बाधित पृथ्वी पर लीटेंगे तो निश्चय ही अवेसाहृत सम्बन्धित से मानने वाले अपने जन्म-काल को पीछे छोड़कर उसके बहुत पहिले ही यहाँ पहुँच जायेंगे। अब जन्म ही तब तक नहीं हुआ होगा तो बुढ़ा या धीर घृत्यु तो दूर की बातें होयी ही।

‘सोवियत इकोनॉमिक जर्नल’ के १४ अगस्त १९६१ ई० के अंक में प्रकाशित अपने एक लेख में डा० बोरीस क्रोसोव्स्की (Dr Boris Krossovsky) ने, जो वास्तव में एक प्रतिष्ठित वैज्ञानिक हैं लिखा था: — The state of weightlessness affecting travellers in space would keep their bodies from ageing during space flight.’ अर्थात्: “वेद्य” में लकर करने वाले यात्रियों को प्रभावित करने वाली भार-शून्यता की स्थिति उनके शरीरों को उस वाता के शीर में बूढ़े होने से बचावेगी। इसका कारण बताते हुए उन्होंने आगे लिखा— “Time goes by much more slowly in cosmic space than on earth” अर्थात्: “विश्व वेद्य” में काल पृथ्वी की अपेक्षा बहुत अधिक धीमी गति से चलता है।

आगे चलकर इस प्रक्रिया को समझते हुए यह लिखते हैं— (The state of weightlessness alleviates cells of our body of part of the functional tension which weighs on men on the heart, and thereby it protects them from ageing.) अर्थात्: भार शून्यता की स्थिति हमारे शरीर के कोषाणुओं के उस क्रियात्मक तनाव को बहुत कम कर देती है— उस तनाव की जो मनुष्य के हृदय

भौतिक शरीर को अमर बनाने की धोर मनुष्य के कुछ प्रयोग १२४  
 पर मार डालता है। उसे बुझा बनाता है और इस प्रकार उसको बुझाये  
 से बचातो है। अन्त में यह लिखते हैं— Soon we shall no  
 longer be surprised to see patients from space  
 sanatoria return to earth, not only cured of  
 their ailments but also rejuvenated." अर्थात्  
 शीघ्र ही "वेन" के बिना एक बिस्तरा-गृह से लौटे हुए रोगियों को  
 न केवल अपनी बीमारियों से मुक्त हुए अपितु पुनर्जीवित प्रकृति  
 हुए देख कर हमें आश्चर्य नहीं होगा।

सब तो यह है कि जीवन पर विश्व-प्रकृति ने बुझाये और मृत्यु  
 को अरुणत लाल से दिया है फिर भी धृष्ट में हैं। हुए बेत की तरह  
 यह इस सोम मार और अन्तर्गत को तोड़ फेंक कर अमर होवाने की  
 कामना में हमेशा प्रयत्न करता है। उसकी सतत प्रयत्न रही है—  
 "मृत्योर्मां प्रमृताङ्गमय" (मुझे मृत्यु से दूर अमृत की ओर में बना)।  
 मृत्यु की दूर होनेसे के हम प्रयत्नवात् करते रहते हैं— जसे ही हमें  
 बार बार इस प्रयत्नवात् में मुह की लानी पड़े। हमारे इस प्रयत्नवात्  
 की वधि रत्निकमात्र ठादुर ने भी स्मृत किया है—

ए अमरता अराधरे स्वर्ग-मार्ग देये  
 सब जेये पुरातन कथा, सब जेये  
 पञ्जीर अमरन "येते नाहिधिबो" हाय  
 सबूयेन बितेहय लख जेये जाय।

अर्थात् इस अमरता अराधरे में स्वर्ग से लेकर पृथ्वी तक सबसे पुरानी  
 बात, सबसे गहरा रोग यही है कि "मैं तुम्हें जाने न दूँगा।" लेकिन  
 हाय तो भी जाने देना चाहता है, तो भी बना जाता है।

मृत्यु की अनिवार्य मानकर उसके सामने घुरने डेक देने की इस निराश्रयपूर्ण प्रवृत्ति के विरुद्ध हमें वैदिक भारत के एक सरम-बड़ा ऋषि के यह आशा— भरे शब्द मानो हमें हमारे सही स्वप्न का आभास देते हुए चुन पड़ते हैं—

“— — — — अनाम ज्योतिरमृतामृतम् । विदमृषिभ्यः प्रथ्याह-  
हामाग्निनाम देवान्स्वर्ग्योतिः ।” अर्थात् हम ज्योति (धरात) में  
बहुल कर धमर होगये हैं । घुम्बी से बनकर हम प्रकाश पूर्ण आकाश  
में ऊपर बढ़ गये हैं । अब हम प्रकाश में जप में स्थित देवों  
(प्राणियों) को जानते हैं, उनके वासस्थान को जानते हैं और (उनके  
विषय स्वप्न की आधार) ज्योति को जानते हैं ।

देव के इस ऋषि ने इन शब्दों के वाच्यता से हमें एक विशि-  
ष्टता की झलक दी है । हम सब अपने शरीरों के घुल पड़कर इसेष्टन  
कलों के निरन्तर बहने वाले प्रकाश-धुब्ध में परिवर्तित होते हुए  
अपने सहज रूपों में सदा धमर बने रहते हैं — जैसे और विश्व प्रसार  
इसका विवेचन हम अपने परिच्छेद में करेंगे ।



## आठवीं परिच्छेद

### हमारा अमर अस्तित्व

विद्यमे परिच्छेदों में मनुष्य शरीर के सभी धर्मों का मूल-भूत रासायनिक और आणविक विश्लेषण कर हम यह बात स्पष्ट कर आये हैं कि यद्यपि व्यावहारिक दृष्टिसे के लिये हमने उन सभी अणुओं के अलग अलग नाम रख दिये हैं किन्तु भी उन सब के एक ही और बनावट में सबसे छोटी एक मात्र परमाणुओं का ही उपयोग किया गया है। न केवल हम मनुष्यों के शरीर अथवा समस्त प्राणी, पहाड़ नदी, समुद्र वृक्षों सूर्य चंद्र और तारे सब के सब, अपने भिन्न भिन्न आकार-रंग-रसों गुणों और बलों के बावजूद, केवल ही एक मात्र परमाणुओं के ही बने हुए हैं। परमाणु के अपने मूल-रूप में धारण समस्त शक्ति और अशक्ति अपने एक रूप में होते हैं। एक भारतीय ऋषि के अर्थों में "यत्र बिम्बश्चक्रीयेकनीडम्" (परमाणु ही वह एक मात्र आधार है जहाँ वह सम्पूर्ण विश्व एक ही घूर्णने में घूम बैठा है)। विज्ञान ने आज हमें जितनी दृष्टि-शक्ति की रासायनिक भलक दी है उसने यह स्पष्ट हो जाता है कि नाम और रूप के लक्षणों और बराबरी में ही के बावजूद सम्पूर्ण घर और अंतरिक्ष अपने मूल रूपों में केवल ही एक मात्र परमाणुओं की ही बनी हुई हैं। विभिन्न प्रकार हुए होने के बराबर प्रकार के बने बने हैं और उनके अलग

घमर नाम भी रखते हैं फिर भी हम यह बसूषी जानते हैं कि मामों घोर क्यों में बेमिग्न होते हुए भी यह सब एक ही तत्व सोने के बने हुए हैं। इसी कारण हम उन सबको "सोने के गहने" कहकर यह बात स्पष्ट कर देते हैं कि उन सबका धूस जवादान केवल सोना ही है। ठीक वही बात बिस्व-सहि पर भी लागू होती है। परमाणुओं घोर यह कहना घोर भी अधिक तत्व होना कि प्रोटनों न्यूट्रॉनों घोर इलेक्ट्रॉनों के कोटि कोटि बिबिध जाकारों घोर क्यों में संघटित पिण्डों को ही हम बराबर सहि या बिस्व-सहि कहते हैं।

परमाणु जाहे यह किसी एक तारे के गठन में लगे हुए हो घोर जैसे किसी एक चीटी घटका एक हाथी के शरीर में सब जगह उनका एका हो गठन है केन्द्र ॥ एक या अधिक प्रोटन घोर न्यूट्रन वण एवं उस केन्द्र के चारों घोर एक या अधिक बक्षायों पर प्रति सेकाइ १०६, • भीत के बीचमे मिरतर बोझी रहनेवाले इलेक्ट्रनकल। सरलतम घोर बम-तालिका के अंक १ के तत्व हाइड्रोजन (एक प्रोटन घोर एक इलेक्ट्रन) के सेकर सर्वाधिक कटिल घोर भारी तत्व यूरे-नियम (६२ प्रोटन १४३ १४६ न्यूट्रन घोर ६२ इलेक्ट्रन) तक एका तत्व इन तीनों बलों (केवल हाइड्रोजन को छोड़कर) क्योंकि उसमें प्रोटन घोर इलेक्ट्रन ही होते हैं घोर न्यूट्रन नहीं होता) को ही बमरा: एक एक कर बजती हुई संख्याओं से पड़े हुए हैं। उन सब तत्वों में कोई नौतिक सेह नहीं होता केवल इन तीनों बलों का संख्यामंश सेह ही उनके दिख बजने वाले स्वरूप में का बनक घोर कारण है। यह तीनों बल ही सम्पूर्ण बिन्व के साधिम बंध-अवर्तक हैं। इन तीनों बलों को लेकर ही बिस्व के सब बर घोर घबर रहे

जाने वाले विष्ट एक ही गोत्र, एक ही विरादरी के जात-मार्ग हैं।

अर्थात् हम जीने परिच्छेद में लिख पाये हैं इन तीनों कणों में प्रोटन कण वर वन बिद्युत् का आवेश रहता है इलेक्ट्रॉन कण पर ऋण बिद्युत् का आवेश रहता है और न्यूट्रॉन कण पर किसी तरह का भी बिद्युत् आवेश नहीं रहता। बिद्युत् के यह धनात्मक या ऋणात्मक आवेश क्या है और इनका उद्भव कहाँ है इस बात को अबतक तो हम नहीं जान पाये हैं। विश्व का यह एक महान् रहस्य है। इनकी बात तो हम अबतक जानते हैं कि वे दोनों दो बुनियादी उपादान हैं जिनसे परमाणु की रचना हुई है। हो सकता है कि यह दोनों सर्व्व धर्म में बलित पुण्य और प्रकृति में वन-बिद्युत् तो पुरुष और ऋण विद्युत् प्रकृति। ऐसा होना बहुत कुछ सम्भव भी है क्योंकि सर्व्व ज्ञान के अनुसार पुरुष तो लुहि-रचना में अवस्थित बना हुआ केवल तटस्थ ब्रह्म रहता है और प्रकृति उस पुरुष की सुभाकर, उसके चारों ओर एक कुगल नर्तकी की तरह नाचकर, लुहि-रचना के समूचे ध्रुव का विस्तार करती है। आज का विज्ञान भी यह कहता है कि वन शक्ति का प्रोटन तो महज केन्द्र में ही बैठा रहता है परन्तु ऋण शक्ति का इलेक्ट्रॉन उसके चारों ओर एक वृत्त में नाचना हुआ हुनरे परमाणु की अपने परमाणु से बिपका कर उसके बड़े बड़े अणु और तत्व बनाना है और इन प्रकार सम्पूर्ण विश्व का निर्माण करने में प्रवृत्त रहता है।

प्लाम्बोप्योचनियत् के एक अधि में कहा जा- "सोऽयमयम् । एवोऽम्बुस्याम्बुवायेय" अर्थात् उसने (विधाना पुरुषने) रामना की में धकेता है। बहुत बन्ध और इसनिये समस्त-लुहि को ज्ञान



हूँ। पुरख की इस एक से अनेक बनने की कामना को पूरा करने का बीड़ा धानी इत इलेक्ट्रन ने ही खाया था।

यह इलेक्ट्रन भी एक अद्भुत और विभाग को बनभन में शक्त देने वाली चीज है। एक कुशल बहुकणिके की तरह यह भी कभी कण (Particle) बन जाता है और कभी तरंग (Wave) बन जाता है। जिस कण्डू भी कब बनाने से उसकी सहि-रचना के अपने कठामे हुए काम में मदद मिलती हो वह सुरक्षित कब कण्डू उसी रूप को ग्रहण कर लेता है। यहाँ पर हमें इलेक्ट्रन के इन दोनों रूपों के भौतिक प्रसार को समझ लेना चाहिये। अपने कण रूप में चूकर गति करते समय इलेक्ट्रन की लघुची शक्ति (Energy) इसके कण में बँधी हुई रहती है। जब यह एक तरंग बनकर गति करता है तो पानी की तरंगों की तरह इसकी शक्ति जो अधिक और अधिक चित्कृत क्षेत्र में फैलती जाती जाती है और "वेव" (Space) के अन्तरे भाग तक इसकी पहुँच हो जाती है वहाँ सर्वत्र इसकी शक्ति वीं बिखरती जाती है। इस तरंग की लघुची मात्रा भर इसकी शक्ति की कुल मात्रा इसकी बहाव-बाध के साथ साथ "वेव" में लगातार बिखरती चलती है। इस कारण धीरे धीरे धीरे धीरे हुए इसके बहाव के साथ साथ इस तरंग की तीव्रता कम होती जाती जाती है और यह धीरे धीरे वयःकोर होती जाती है।

इन दोनों रूपों में दूसरा प्रसार यह है कि यदि कोई कण गति करता हो और वेग करते हुए मार्ग में उसके ठीक सामने कोई रुकावट या लड़ी हो तो वह वहीं रुक जायेगा। उस रुकावट के ऊपर या नीचे की ओर मुड़कर वह धीरे धीरे वहीं रुक जायेगा। तरंग की बात

जस तरह से विद्युत् उत्पन्न है। यदि किसी रंग के  
कोई द्रव्यत्व का बारी होवे तो वह रंग का  
नीले की ओर मुड़कर अपने बरत हो जाता है  
जाने यों मुड़ जाने को 'वैज्युस' (Violet)  
कोई बीज रंग है या जल रंग का है कि  
के हाथ में वह एक छोट्टी छिन्नी है  
के इन 'बिज्यों' और 'जल' के बरत  
और 'ट्रोंग्स' (Troughs) के  
छिन्नी की से बिज्यों और जल का  
सबई (Wave-length) के

वह बरत का बिज्य

प्रोदन है यदि रंग के रंग

जान बिज्य का है बिज्य

००० ०००,००० बिज्य

पहिले हम बिज्य

इसे प्रोदन की बिज्य

उत्पत्ति के बिज्य

और बिज्य बिज्य

प्रोदन की बिज्य

००० बिज्य

बिज्य

एक बिज्य

बिज्य

रस्मिति का  
। बेती रहती  
ट ग जाने पर  
। इसे प्रोदन की  
वह प्रोदती है,  
बेने की समता  
गों के बरत पर  
तक मौजूद बना

कुछ बिज्य यह  
एक नहीं है। वो

(Six dimen

प्रपनी तरंगों के

बिज्य के लो

बीजे की ओर

नीम प्रायामों

प्रायामों की

इसलिये उन

उत्पत्ति ही

( के बीजे प्रोदन की

ही प्रोदन के

वह बिज्य है

हम सब समर हैं

की तरंगों को उस इलेक्ट्रन का ही एक भाग मानें तो इस बात का  
 यही मतलब होगा कि एक इलेक्ट्रन एक परमाणु से भी बड़ा है ।  
 यदि यह बात हो तो हम एक अजब उलझन में कैसे पड़ेंगे । हम  
 तब यह नहीं समझ पायेंगे कि किस प्रकार एक अकेले परमाणु की  
 कक्षाओं पर अनेक इलेक्ट्रन उस परमाणु के सग बनकर घूम सकते  
 हैं ? क्योंकि किसी दूसरे कण से टकरा हो जाने पर ही एक इलेक्ट्रन  
 अपनी सम्पूर्ण सामरिक शक्ति का उस टकरा मारने वाले कण को  
 सौंप सकती है इसलिये निश्चय ही उसकी यह शक्ति उस इलेक्ट्रन में  
 किसी एक ही जगह केन्द्रित रहती होगी । डॉम्स ने इस बात को  
 सरलता से समझाने के लिये एक चरक दिया है । मक्ड़ी के जाले में  
 तन्तु बहुत ही बारीक और सुस्पष्ट होते हैं । माल कीजिये कि उस  
 जाले के कुछ तन्तुओं में प्रत्येक के बिचले भाग पर एक एक ब  
 मक्ड़ी बैठी हुई है । अब मैं चढ़कर वहाँ नहीं भी वह तन्तु जावेगा  
 उस तन्तु पर बैठी हुई बजा मक्ड़ी भी उसके साथ साथ वहाँ का  
 बुझिगी । ठीक इसी प्रकार जिस बिन्दु पर उस इलेक्ट्रन की शक्ति  
 केन्द्रीभूत है वह उसके चारों ओर केनी हुई तरंगों द्वारा मार्ग निर्देश  
 वाक्य सभी दिशाओं में एक अनिश्चित दूरी तक का सहेगा । यदि उस  
 ही वह तरंगें उस दशावध पर होकर उस पार जाती चारों ओर  
 देता करती हुई अपनी मूल्य विद्या बहल जेंगी । तरंगों का यह  
 विद्या-परिवर्तन इलेक्ट्रन पर लीझाया जाकर उसके मार्ग पर अनुबध  
 प्रसार करेगा ।

जान्य होता है कि यह तरंगें उस इलेक्ट्रन की अप्रणामी मार्ग

बढ़ियाएँ हैं जो चारों ओर बिखरे हुए पदार्थ की उपस्थिति का मानकर उसके अनुसार ही उस इलेक्ट्रन को मार्ग-निर्देश देती रहती हैं। इस प्रकार वह इलेक्ट्रन उन परमाणुओं के निबट न जाने पर भी अपनी तरंगों द्वारा उनसे प्रभावित हो सकता है। इलेक्ट्रन की तरंगों को हम “वेव” (Space) में जहाँ होकर वह घूमती है एक जाल बिछा की ओर उस इलेक्ट्रन को मार्ग-निर्देश देने की क्षमता की बहुत मान सकते हैं। इस प्रकार अपनी तरंगों के जाल पर इलेक्ट्रन अपनी भौतिक स्थिति से भी दूर बहुत दूर तक मौजूद बना रहता है।

यही धाकर एक विचार उठ सकी होता है। कुछ बिद्वत् यह मानते हैं कि इलेक्ट्रन-तरंगों का कोई भौतिक अस्तित्व नहीं है। वो इलेक्ट्रनों को अपनी तरंगों के लिये छः आयामों (Six dimensions) का “वेव” चाहिये और उस इलेक्ट्रनों को अपनी तरंगों के लिये तीन आयामों का “वेव” चाहिये परन्तु भौतिक वेव के तो वस्तुतः तीन ही आयाम होते हैं। बाह्य और बायें पीछे की ओर और घाये की ओर ऐसे ऊपर और नीचे। “वेव” जहाँ तीन आयामों से अधिक का है ही नहीं जहाँ छः और छः से अधिक आयामों की आवश्यकता रखने वाली तरंगें हो ही नहीं सकती हैं। इसलिये उन बिद्वत् के मतानुसार इलेक्ट्रन-तरंगों का कोई भौतिक अस्तित्व ही नहीं है।

दूसरी एक विचार यह है कि इलेक्ट्रन-तरंगों के जैसे गुण-धर्म बतलाये गये हैं उनको निधाने के लिये निरूपण ही बनना बेव प्रकृत से अधिक होना चाहिये, परन्तु आइन्स्टीन का कहना है कि

जिन्ही की नीतिगत प्रक्रिया का बेग प्रकाश-बेग से अधिक हो ही नहीं सकता। इसलिये इलेक्ट्रन-तरंगों का कोई नीतिक अस्तित्व नहीं हो सकता।

जब हम तरंगों के एक निश्चित पट्टे पर बिसे 'समूह' (Group) कहते हैं और करते हैं तो यह विषय दूर हो जाती है। जब कुछ नियमित तरंगों को अपने बीच और तरंग-सम्बाधनों में एक दूसरी से काफ़ी ज़ोर होती है एक साथ मिलती है तब एक अनियमित 'तूफ़ान-क्षेत्र' (Stormy region) पड़ जाता होता है। इस क्षेत्र का विस्तार छोटा होता है और क्योंकि इस क्षेत्र का भी इलेक्ट्रन के बराबर वेग होता है इसलिये यह इलेक्ट्रन के साथ २ ही चलता है। इसका यह मतलब होता है कि वह नियमित तरंगों को ऐसे अनियमित 'तूफ़ान-क्षेत्र' की जगह देती है इस 'तूफ़ान क्षेत्र' के पीछे से निरन्तर आ जाकर इस 'क्षेत्र' में होकर चढ़ती रहती है जिससे इस क्षेत्र को निरन्तर ताकती-तरंगों का योगदान मिलता रहता है। यही कारण है जिससे वह घटक-तरंगों उस इलेक्ट्रन के लिये उसके गन्तव्य-बन्ध की अधिक जानकारी लाकर देने का काम करती हैं। इसी कारण ही यह विषय कि इलेक्ट्रन का बेग प्रकाश बेग से अधिक कैसे हो सकता है दूर हो जाती है।

को भी हो इस बात से यह नहीं समझ लेना चाहिये कि ऊपर प्रक्रिया में उल्लेख होने वाला तूफ़ान-क्षेत्र एक नीतिक वास्तविकता है। यह 'क्षेत्र' तो केवल उस इलेक्ट्रन की चढ़ी उस 'क्षेत्र' में उपस्थिति होने की सम्भावना का ही एक वास्तविक है। इसलिये यह 'क्षेत्र' बहुत एक सम्भावना का चीतक होता है और सम्भावना

कोई भौतिक वस्तु नहीं होगी। इस बात को लक्ष्य कर श्रोडिंजर (S. hrodinger) ने कहा है "Something that influences the physical behaviour of something else must not in any respect be called less real than the something it influences, whatever meaning we may give to that dangerous epithet 'real'।" अर्थात् कुछ भी (प्रक्रिया वस्तु या घोर वृत्ति) को किसी दूसरी (प्रक्रिया वा वस्तु) के भौतिक व्यवहार को प्रभावित करती है वही 'वास्तविक' नहीं कही जा सकती — जैसे ही हम उस वास्तविक विचारण "वास्तविक" को चाहें जो घटते हैं। यह हमें ही पड़े है कि इलेक्ट्रॉन-तरंगों इलेक्ट्रॉनों के व्यवहार को प्रभावित करती रहती हैं उन इलेक्ट्रॉनों को जो भौतिक वस्तु होते हैं।

इसका यही निष्कर्ष है कि इलेक्ट्रॉन-तरंगों की चाहें जो प्रकृति हो वह "Space" में सबकुछ सही दिशाओं में एक अपरिच्छिन्न रूप में अपना विस्तार-क्षेत्र बनाये रखती हैं।

इलेक्ट्रॉन का अन्य विद्युत्-चुम्बकीय क्षेत्र (Electro-magnetic field) में है हुआ है। इसी क्षेत्र की अन्य सगुणों प्रोटॉन, पॉज़िट्रॉन और कोस्म हैं। आधुनिक भौतिक विज्ञान इस मान्यता के आधार पर ही चलता है कि पूर्ण भौतिक विज्ञान के क्षेत्र का सम्पूर्ण "Space" एक क्षेत्र (Field) है अर्थात् यह कहना अर्थात् सुनिश्चित होगा कि "Space" में एक ही क्षेत्र को तीन दिशाओं में विद्युत्-चुम्बकीय चुम्बकीय क्षेत्र और अन्य मान्यता है। विद्युत्

ध्रुवकीय क्षेत्र की बिद्युत् चुम्बकीय शक्ति से ही इलेक्ट्रान प्रोडन रीनिट्रन और प्रगता के करण फोटन का जन्म हुआ है। इस क्षेत्र को सब सन्तानों के दो रूप होते हैं,— करण और तरंग। तरंग के रूप में इन सबका सर्वत्र प्रभाव प्रसार हो सकता है। तरंग होने के कारण ही यह सब अपनी अपनी बिद्युत् 'फ्रीक्वेंसी' (Frequency) से विकिरण (Radiation) प्रकाश प्रकटा उत्पन्न करती हैं।— बिद्युत् चुम्बकीय क्षेत्र की सभी सन्तानों को यह गुण विरासत में मिला हुआ है। इन सबकी गति प्रति सेकण्ड ३ लाख कीलोमीटर प्रकाश १८६ ००० मील है।

बिद्युत्-सृष्टि की समुची प्रक्रिया में हम मुख्यतः इलेक्ट्रान को ही सक्रिय और प्रमुख भाग लेते हुए देखते हैं। इलेक्ट्रानों की तेज गति में ही धारा और ऊष्मा या गर्मी पैदा होती है। बिजली की जो शक्ति हमारे घरों और सड़कों को रोशन करती है और बड़े बड़े कारखानों की चलती है वह इलेक्ट्रानों के 'बहते हुए' समुद्र के सिवाय और कुछ भी नहीं है। जब इलेक्ट्रानों की बहुत बड़ी संख्या अपने परमाणुओं से छलग हो जाती है और एक तार में से चलती है तब हम कहते हैं कि बिजली तार में है "बहती है। गति करते हुए इलेक्ट्रानों को बिजली कहते हैं। इसी प्रकार गति करते हुए इलेक्ट्रान ही "चुम्बक क्षेत्र" (Magnetic field) पैदा करते हैं। बिद्युत् या बिजली एवं चुम्बक का एक छट्टा जाता होता है। इसीलिये इनके संयोजन "विद्युत्-चुम्बकीय क्षेत्र" (Electro-magnetic field) कहते हैं। रेडियो तरंगों की तरह ही प्रकाश भी इलेक्ट्रानों की गति से ही पैदा होता है।

इस पुस्तक को लिखने का हमारा केवल यह उद्देश्य है कि हम यह बताते कि मनुष्य अपने सहज स्वाभाविक रूप में हमेशा धर्म बना रहता है। धर्म से ही वह मनुष्यत्व है और सर्व-व्यापी है। मनुष्य को जीतकर धर्म होवाने के लिये वह धर्मत्व को कुछ भी भुलकर साधन अपनाता या रहा है और उन साधनों को धर्मत्व पर भी वह जो हमेशा मनुष्य के हाथों पहुँच ही जाता बना या रहा है, वह सब उसके अपने स्वयं को न जानने के कारण ही है।

मनुष्य भी जान-बूझ एक बस्तुरी-धूप (mask Deer) की तरह ही व्यवहार करता है। धूप की नाभि में ही बस्तुरी मरी जाती है। उसी गुणवत्ता के कारण वह धूप केवल और धूमिल-ता होकर धर्म के उस धूपत्व के जीत को जीत करने के बुरा प्रयास में बीड़बुल करता रहता है। वह नहीं जानता कि उस धूमत्व को देने वाली बस्तुरी तो उसी अपनी नाभि में ही बीड़बुल है।

ठीक इसी प्रकार मनुष्य भी नहीं जानता है कि उसके अपने धर्म में ही "धर्मत्व" का जीत विद्यमान है। यह जीत है इलेक्ट्रिक प्रकाश-तरंगों—उस इलेक्ट्रिक की प्रकाश-तरंगों जिनसे उसका भौतिक धर्म निर्मित हुआ है। इस बात को न जानकर ही वह धर्मत्व की ओर में बाह्य साधनों का बुरा प्रयास लगा रहता है।

विज्ञान ने आज विश्व की अनेक दुर्बल और अज्ञान पर्याप्तियों की प्रयोगात्मक उमेड़ चुन कर उनके समुचित सर्वपूर्ण, बुद्धि बाह्य और पर्याप्त समाधान प्रस्तुत कर दिये हैं। विज्ञान विश्व-तन्त्र का एक रूप है। वास्तव में विज्ञान और तन्त्र दोनों पर्याप्तवादी हैं—विज्ञान को ही तन्त्र वह समझते हैं और तन्त्र को विज्ञान। विज्ञान की



ब्यान्डाओं की "छोटी लाल तरंगें या निरलें" (Infra-red rays) होती हैं। इन छोटी लाल तरंगों से घोर नीचे चलकर इनसे भी बसबें हिस्से छोटी ब्यान्डाओं की "रडार तरंगें" (Radar waves) होती हैं। रडार तरंगों से बसबें हिस्से छोटी ब्यान्डाओं की "नपु रेडियो तरंगें" होती हैं और उनसे भी बसबें हिस्से छोटी ब्यान्डाओं की "साधारण रेडियो तरंगें" (Ordinary radio waves) होती हैं जिनके द्वारा हम रात दिन अपने रेडियो 'सेटों' पर दुनिया भर की स्टेशनों से संपीत और आकरें सुनते रहते हैं। इन साधारण रेडियो तरंगों से भी बसबें हिस्से छोटे "ब्यान्डा" होते हैं जो इलेक्ट्रॉनों की बृह-प्राद के कारण रात-दिन हमारे शरीरों में उत्पन्न होते रहते हैं। स्पष्ट ही इलेक्ट्रॉन-तरंगें साधारण-प्रकाश, केवल जिते ही हमारी आँखें देख सकती हैं के कृष्ण-प्रकाश से एक लाल हिस्से छोटी कृष्ण-प्रकाश करती हैं — उसे भला तब हम कैसे अपनी आँखों से देख सकते हैं। यह अदृश्य प्रकाश-तरंगें हैं। हमारे शरीर के कल कल से यह निकलती रहती हैं परन्तु उनका अनुभव हम केवल ताप के रूप में ही कर सकते हैं। इनके कारण ही हमारे शरीर गर्म रहते हैं।

इनको प्रत्यक्ष देख नाने के लिये हमें "साधारण प्रकाश तरंगों" (हमारी आँखें जिनको देखने की क्षम्यस्त हैं) का साहारा लेने की जरूरत पड़ जाती है। साधारण प्रकाश-तरंगें हमारे शरीर की इन इलेक्ट्रॉन-तरंगों पर पड़कर उन्हें परिचयित कर देती हैं और तब हम एक दूसरे के शरीर को देख सकते हैं।

अतः हमें यह ज्ञान लेना जरूरी है कि हम देखते कैसे हैं ?

जिस प्रकार ज्ञान में ज्ञानि हरने ज्ञान के समर एव भिन्नो से  
 एकद्वार पर ज्ञान भिन्नो का ज्ञानी हैं और तब वह भिन्नो ज्ञान  
 महोन दोनों में 'गुरु गुरु' या 'सरसरारुह' करती है और ज्ञान  
 गुरु गुरु या सरसरारुह को हमारा व्यवस्था ज्ञान के लक्ष्यों में  
 समर लेना है। हीन ज्ञानी प्रकार ज्ञानों में भी प्रकाश-रूपों ज्ञानों  
 और ज्ञानों की ज्ञान के ज्ञान छोटे ज्ञान-विषयों में 'गुरुगुरु' या  
 'सरसरारुह' करती हैं और इस प्रकार ज्ञान ज्ञान-विषयों को  
 व्यवस्था 'हृदि' समरता है।

जान के ज्ञान के विषय हृदि पर, ज्ञान ज्ञान या  
 'रेटीना' (Retina) रहते हैं। ज्ञानों छोटे छोटे ज्ञान या ज्ञान  
 हीन रहते हैं जो प्रकाश के ज्ञान ज्ञान होते हैं। इस 'रेटीना' में  
 ज्ञान ज्ञान के 'हृदि-समरणी विषय' (Visual pigments)  
 होते हैं जो (१) लुटेन (Lutein) या ज्ञान (Xanthophyll)  
 (२) हेमोग्लोबिन (Haemoglobin), (३) ज्ञान हेमोग्लोबिन  
 (Oxy haemoglobin) और (४) मीथेमोग्लोबिन (Methy  
 moglobin) हैं। विषय हीन 'विषय' वही हैं जो ज्ञान  
 के रक्त में रहते हैं। शरीर को रक्त-वाहिनी ज्ञान 'रेटीना'  
 को प्रचुर ज्ञान में रक्त ज्ञान ज्ञान ज्ञान करती रहती हैं।

'रेटीना' के ज्ञानों छोटे छोटे ज्ञान या ज्ञान ज्ञान  
 व्यवस्था को ज्ञान ज्ञान ज्ञान ज्ञान के ज्ञान, ज्ञान और रक्त  
 के ज्ञान में ज्ञान हैं, ज्ञान ज्ञान ही ज्ञान कर ज्ञान हैं ज्ञान ज्ञान  
 पर ज्ञान ज्ञान का ज्ञान हीन व्यवस्था रहे। ज्ञान का ज्ञान ज्ञान  
 व्यवस्था ज्ञान का ज्ञान रहता है।

लेम्स एक पारदर्शक धीरे लचीली भिन्नी से बना होता है जो एक ढब पर्याप्त है मरी होती है। यह लेम्स एक घोल नास पेन्नी से लकड़ा रहता है जो लेम्स का इस तरह "फोकस" (Focus) या संयम करती रहती है कि लघाधार या रेडीना पर तीव्र प्रतिबिम्ब पड़े।

दूरबीन तथा माइक्रोस्कोप में फोकस करने के लिये लेम्स को सबसे अधिक धीरे धीरे हटाते रहते हैं जब तक प्रतिबिम्ब इतना सीका न होजाय कि उसे आसानी से देखा जा सके। 'फोकस' करने का व्यावहारिक अनुभव थाप एक घोल "मैग्नीफाइज़ ग्लास" से थोड़ा बहुत कर सकते हैं। कमरे में डेबुल लेम्स बनाकर बीच में बड़े हो जाइये धीरे मैग्नीफाइज़ ग्लास को धीरे धीरे धीरे की धोर से बलिये। प्रथम में धीरे धीरे डेबुल लेम्स का प्रतिबिम्ब फोकस में आजायगा। थाप देखिये कि प्रतिबिम्ब धम्बा है— एक ही लेम्स से बना हुआ प्रतिबिम्ब तथा धम्बा होया।

घास की लेम्स वाली नास-पेन्नी लवणम इसी तरह फोकस करती है पर इसमें लेम्स को मोटा या बतना करके फोकस दिया जाता है। जब लेम्स मोटा होया है तब जलमें से दुबारेने वाली पदार्थ-तरंगें अधिक मुड़ जाती हैं जब लेम्स बतता होता है, तब वह कम मुड़ती हैं। वह बात महत्वपूर्ण है; क्योंकि इस प्रकार लेम्स अपने थापको दूर की धीरे धोर की वस्तुओं को देखने के लिये अनुकूल बना लेता है। पदार्थरत्न के लिये; मान लीजिये कि थाप प्रनाथ का एक दूरस्थ बिन्दु देव रहे हैं। ऐसी व्यवस्था के लिये लेम्स की नास-पेन्नी प्रियित वह जायगी धीरे लेम्स को बतना हो

जाने देपी । जब सेन्स पतले रूप में आ जाता है तब वह प्रकाश-तरंगों को इतना ही मोड़ता है कि घावके रेट्रीना पर एक तीखा बिन्दु बन जावे । पर यदि घाव किसी पास के प्रकाश-बिन्दु की रेखा रहे है तो पतला सेन्स प्रकाश तरंगों को काफी नहीं मोड़ेगा और इससे बिन्दु "फोकस" के बाहर रहेगा । इससे बचने के लिये सेन्स की मांस पेशी सिझुझती है और इस तरह सेन्स अधिक मोटा होजाता है । तब मोटा सेन्स उन तरंगों को अधिक मोड़ता है और बिन्दु घावकी छाँह की रेट्रीना पर फोकस में आ जाता है ।

रेट्रीना पर प्रतिबिम्ब के फोकस में आ जाने के बाद कुछ रज्ज और शंकु प्रकाशित हो जायेंगे और कुछ प्रकाशित रहेंगे । जब घाव प्रकाश के बिन्दु को देखते हैं तब अपेक्षाकृत छोड़े रज्ज और शंकु अधिक प्रकाशित होते हैं और उनके चारों ओर के रज्ज और शंकु प्रकाशहीन रहने हैं । प्रकाशित रज्ज और शंकु उद्दीप्त होकर सक्रिय या स्नायु-प्रापेण अस्तित्व को धरते हैं । जो प्रकाशित हैं वह अस्तित्व को वह तथ्य सुचित करते हैं और अस्तित्व तब प्रकाशित रहेंगे और शंकुओं से प्राप्त सुचना को प्रकाश के एक छोटे बूँद या घेरे के रूप में समझता है । रज्ज या शंकु पर पड़ने वाला प्रकाश चाहे तोड़ हो या भाँटा हर हालत में धेरे जाने वाले स्नायु-प्रापेणों की तीव्रता एक सजल होवी । एक बात तो बकर होगी कि हल्का प्रकाश होने पर रज्ज या शंकु अपेक्षाकृत कम बार स्नायु प्रापेण भेजेंगे । प्रकाश कितना अधिक तीव्र होया उसनी ही अधिक बार स्नायु-प्रापेण भेजा होये ।

अकेल-योजक स्नायु तब उन स्नायु-प्रापेणों को अस्तित्व के

हृदि-केन्द्र में पहुँचा देते। यह हृदि-केन्द्र कुछ विषीय मस्तिष्क कोशिकाओं (Cells) का एक समूह है जो उन स्नायु प्रायों। द्वारा लगे गये संकेतों का धर्म लगाने हैं और उन्हें मिलाकर एक "चित्र" के रूप में देखा करती हैं।

इन मस्तिष्क कोशिकाओं की तुलना घाव जितनी घलवार। छदे हुए चित्र को बनाने जलै बिन्दुओं के कर सकते हैं। घमि घा घल चित्र को धीरे से देखते तो घावको पता चलैवा कि वह कि विभिन्न घावकों के बिन्दुओं से बना हुआ है। जहाँ बहुत से बड़े व बिन्दु होंगे वहाँ लोभ जलता होवा और जहाँ वह बिन्दु छोटे होंगे वहाँ लघु होवा। दूर से देखने पर घावको वह बिन्दु घावत में मिले हुए दिख पड़ेगे। घावको लक्ष निम्न निम्न 'कोशिकीय कोशों' से बना हुआ दूरा चित्र ही दिख पड़ेगा। ठीक इसी प्रकार हृदि-केन्द्र की मस्तिष्क-कोशिकाएँ की निम्न निम्न भाषाओं में उद्गीर्णित होकर बड़े या छोटे 'चित्र' बनाती हैं। हृदि-केन्द्र लक्ष उन बिन्दुओं को मिलाकर एक पूर्ण प्रतिबिम्ब बना देता है जिसे हम अपनी धाँकों से देखकर यह जान लेते हैं कि समुद्र घावत, लव और रक्त की समुद्र घावत को हम देख रहे हैं।

हमारे धरीर के प्रत्येक कण में हमारी इलेक्ट्रिक रात दिन घावने करमायुओं की एक जलता से दूसरी जलताओं पर दूरते हुए घावत घुलन प्रकाश-तरंगों की घावत करती रहते हैं। यह प्रकाश तरंगें घावत छोटी कलाओं की होने के कारण घावत बनी रहती हैं। हमारी घावत निम्न प्रकाश-तरंगों की देखने की घावत है उनकी लम्बाइयाँ ०.००००१६ मीटर (यह लाल रंग के प्रकाश की

तरंग-सम्बाँ है) ये लेकर ६ ०००४२ सेमीमीटर (बैंगनी रंग के प्रकाश की तरंग-सम्बाँ) तक ही होती हैं। हमारी धार्मिक विश्वास इन तरंग सम्बाँडों के प्रकाश को ही देख सकती हैं। इसका कारण यही है कि सूर्य के अलग प्रकाश के उस एक प्रमाण में हमारी धार्मिक की दृष्टि-शक्ति का विकास हुआ है वह इन दोनों सेमीमीटरों की तरंग-सम्बाँडों के अन्तः लाल और बैंगनी रंग के पूर्व प्रमाणों तरंग-सम्बाँडों के आरंभी नीला, हरा, नीला और पहरा नीला (Indigo) रंगों के प्रकाश-क्षेत्र में ही आधुनिक प्रकार है। इन तरंग-सम्बाँडों से छोटी और बड़ी सम्बाँड की तरंगें सूर्य के प्रकाश में प्रसर नहीं होने के कारण हमारी धार्मिक से अज्ञान ही रहती है।

यह बात तो हम पहिले ही स्पष्ट कर चुके हैं कि इलेक्ट्रॉन की यह आधुनिक कल्पना और इस कारण अज्ञान तो अपने धार्मिक प्रमाण तरंगों को निलकर किसी एक ही विद्या में बहने हुई जब अपने मार्ग में दृष्टांत जाती हैं तब वह सब एक ही स्थान पर या आकर इकट्ठी हो जाती हैं और एक सामूहिक रूप में प्रकाश-बुझ बनकर बन पड़ती हैं। इस प्रक्रिया को हम कहेंगे हमारे घरों में अन्तर्गत हुए विद्युत् की लहरों के रूप में बहने रहने हैं। धरती के इलेक्ट्रॉनों से उत्पन्न तरंगों को अपने अपने घरों से अलग अलग बनकर बाहर "वेग" (Space) में निकलने देने का प्रकाश मिलता रहता है। धरती के बाहर की धरती "वेग" में बाह्य धरती निकल कर बहने के लिये उन्हें लुप्त हो जाती है। यदि ऐसा न होता और यदि धरती के सभी इलेक्ट्रॉनों से उत्पन्न होने वाली प्रकाश-तरंगों को एक ही जगह पर आकर इकट्ठा किया जा सकता तो हमारे धरती

हृदि-केंद्र में पहुँचा दिये। यह हृदि-केंद्र कुछ विशेष मस्तिष्क-कोशिकाओं (Cells) का एक समूह है जो उन स्नायु प्रायेशों के द्वारा लाये गये संकेतों का धर्म संग्रहीत हैं और उन्हें मिलाकर एक 'चित्र' के रूप में पेट करती हैं।

इन मस्तिष्क-कोशिकाओं की तुलना चाप किसी ध्वनिधर में दिये हुए चित्र को बनाने वाले बिन्दुओं से कर सकते हैं। यदि चाप उस चित्र को गौर से देखेंगे तो चापको पता चलेगा कि वह चित्र विभिन्न आकारों के बिन्दुओं से बना हुआ है। वहाँ बहुत से बड़े बड़े बिन्दु होने वहाँ लोच काला होना और वहाँ बहुत बिन्दु छोटे होने वहाँ सफेद होना। दूर से देखने पर चापकी वह बिन्दु चापस में मिले हुए दिख पड़ेंगे। चापको तब निम्न निम्न 'संकेतों' से बना हुआ दूरा चित्र ही दिख पड़ेगा। ठीक इसी प्रकार हृदि-केंद्र की मस्तिष्क-कोशिकाएँ भी निम्न निम्न मात्राओं में उद्दीपित होकर बड़े या छोटे 'बिन्दु' बनाती हैं। हृदि-केंद्र तब उन बिन्दुओं की मिलाकर एक पूर्ण प्रतिबिम्ब बना देता है जिसे हम अपनी आँखों से देखकर यह जान लेते हैं कि प्रमुख आकार, रूप और रङ्ग की प्रमुख वस्तु को हम देख रहे हैं।

हमारे शरीर के प्रत्येक अंग में हजारों इलेक्ट्रिक राश विन अपने वरमाद्यों की एक कक्षा से दूसरी कक्षाओं पर दूरते हुए अत्यन्त सूक्ष्म प्रकाश-तरंगों को उत्पन्न करते रहते हैं। यह प्रकाश तरंगें अत्यन्त छोटी वरमाद्यों की होने के कारण अदृश्य बनी रहती हैं। हमारी आँखें जिन प्रकाश-तरंगों को देखने की सम्मत्त हैं उनकी सम्मत्तता =  $4,000-7,000$  सेमीमीटर (यह ज्ञान रंग के प्रकाश की

तरंग-लम्बाई है) से लेकर ०.००००४२ सेमीमीटर (बैंगनी रंग के प्रकाश की तरंग-लम्बाई) तक ही होती है। हमारी धर्मि नेचल इन तरंग लम्बाइयों के प्रकाश को ही देख सकती है। इसका कारण यही है कि सूर्य के जिस प्रकाश के उस एक प्रमाण में हमारी धर्मि की दृष्टि-धर्मि का विकास हुआ है वह इन दोनों सेमीमीटरों की तरंग-लम्बाइयों के अन्तः लाल और बैंगनी रंग के पक्षे लम्बाइयों के आरंभी नीला, हरा, नीला और गहरा नीला (Indigo) रंगों के प्रकाश-क्षेत्र में ही अत्यधिक प्रचुर है। इन तरंग-लम्बाइयों से छोटी और बड़ी लम्बाई की तरंगें सूर्य के प्रकाश में प्रचुर नहीं होने के कारण हमारी धर्मि से अभिन्न ही रहती है।

यह बात तो हम पहिले ही स्पष्ट कर पाये हैं कि इलेक्ट्रॉन की यह अत्यन्त सूक्ष्म और इस कारण अणु की आगे जाती प्रकाश तरंगें ही मिलकर किसी एक ही दिशा में बहती हुई जब अपने मार्ग में बाधा पड़ती है तो वह सब एक ही स्थान पर या जाकर इकट्ठी हो जाती है और एक सामूहिक रूप में प्रकाश-गुच्छ बनकर चल पड़ती है। इस प्रक्रिया को हम हमेशा हमारे घरों में चलते हुए बिजली के तन्तुओं के रूप में देखते रहते हैं। घरीर के इलेक्ट्रॉनों से उत्पन्न तरंगों को अपने अपने कक्षों से अलग अलग बाहर बाहर 'रैश' (Space) में निकलते रहने का अवकाश मिलता रहता है। घरीर के बाहर की घीर 'रैश' में जाये और निकल कर बहने के लिये उन्हें शुद्धी प्राप्त मिलती है। यदि ऐसा न होता घीर यदि घरीर के सभी इलेक्ट्रॉनों से उत्पन्न होने वाली प्रकाश-तरंगों को एक ही जगह पर जाकर इकट्ठा किया जा सकता तो हमारे घरीर



का वह स्वाम सक-सक कर २५ वाट (Watt) के एक बल्ब की तरह ही जलता रहता और प्रकाश प्रकाश देता रहता। सब ही; हमारे शरीर में उत्पन्न होने वाली वह प्रकाश-तरंगें या विद्युत्-शक्ति इतनी तेज होती है कि यह, जैसा हम धमरी कहें, न केवल २५ वाट के एक बल्ब को ही जलावे अपितु पानी से भरी हुई चार बड़ी बड़ी कैतलियों के पानी को भी जवाब दें जबकि एक स्टीम-मोटर एंजिन को जलाकर हमारे घर के एक बड़े कमरे में चारों ओर घुमावे।

सब तो यह है कि प्रत्येक जीवधारी पक्ष, बीघे और जन्तु-अथवा प्रकाश उत्पन्न करते हैं। यह प्रकाश शीत होता है। जीवन से प्राप्त हुई ऊर्जा (Energy) जीवों में प्रायः चलने ठहरने, सोलने, बैठने अथवा दूसरे काम करने में ही खर्च होती रहती है। इस ऊर्जा का कुछ भाग तो ऊष्मा (Heat) और कुछ रासायनिक शक्ति में परिवर्तित हो जाता है। कुछ प्रत्यक्ष दार्शनिक शिवाघों में काम जाता है पर कुछ ही और अन्य जीवों में वह जीवन-जनित शक्ति प्रकाश अथवा विद्युत्-शक्ति के रूप में निकलती है।

जुमनू तो जान सबने ऐसे ही हैं। इसके पैर के बिजली सर्पों की निधनी सत्ता से प्रकाश निकलता है। गर की अर्पण भावा में वह संय बड़ा होता है। विश्व इण्डियन तथा ब्रिटीश अमेरिका में एक प्रकार के मोडिल जन्तु के जल में काफी तेज प्रकाशमय भग होते हैं। इनका प्रकाश सबसे अधिक जलकरार तारे में भी तेज होता है।

जानौन के सातवात मिलने वाली ईल (Eel) जलमी की पूँछ के ऊतकों (Tissues) से लेकड़ों जलक विद्युतीय ऊर्जा

(Energy) पदा होती है। प्राचीन-काल में यकिया सिर बर्ब या इसी प्रकार के रोपों का इलाज करने के लिये तम्बाकू के बिलिस्तक रोमी को किसी ऐसी मछली के शरीर पर नये बरों काड़ा कर देने थे जो उसके शरीर को घनने शरीर से उत्पन्न बिजली से कुछ समय के लिये जुग्न कर देती थी।

बह में आधमी जितनी हैं मछली को येनियों के समुच्चय से पदा हुई बिजली से एक साथ बारह बम्ब जगाये जा सकते हैं।

उपल-सापरी में अबिल्लर पाई जाने वाली टारपीडो (Torpedo) प्रकृति इलेक्ट्रिक रे पिरा (Electric rayfish) के तिर घोर हुए पंखोरन फिन्स (Pectoral fins) के बीच, शरीर के दोनों घोर एक एक बिजली पदा करने वाला संग होते हैं। टार पीडो में यह सारे बिजनीय संग उन तन्तुओं से बने हैं जो बहसे उनके फिन्स (Gills) को घोलने घोर बन्द करने का काम करते थे। प्रत्येक संग बड़ा बुधा, अपदा तथा अनेक पद-बोले आनी का बना होता है। ये जाने रेशोदार ऊनक (Fibrous tissues) को बीबारों से एक घुनरे से घलव लिये हुए होते हैं। हर एक जाने में साक साहब की तरह का एक पदाय बरा होता है जो बिजुतीय इध्य का नाम देता है। इन जानों में बपरे इलेक्ट्रिक प्लेट होने हैं जिनके एक घोर तन्तुओं का एक गुच्छा होता है। माड़ी के घोर जाने इलेक्ट्रिक प्लेट बल (Negative) तथा घुनरे बन (Positive) होते हैं। बिछनू-बारा ऊनर से नीचे की घोर बलनी हैं। रेत में आधी बेंसी हुई एक टारपीडो आधमी ३०-बास्ड सक का पहरा पार सकती है।

धमरीकी वैज्ञानिक प्रोफेसर बीब (Beebe) ने सन् १९१० ई० में घाया भीन सह्राई तक घीर स्थित वैज्ञानिक पिक्टर्ड (Piccard) और धमरीकी डॉन वॉलश (Don Walsh) ने ४॥ भीन सह्राई तक समुद्र में उतर कर सर्वेक्ष कृ पन, भेम्बर्न रिक्त, कोल्स्टेसिप्रन विज्ञ इत्यादि अनेक प्रकाशमय मङ्गलियाँ देखी थीं। समुद्र-तल के घनघोर दान्धनार में बिचरये के सिधे इन जीव-जन्तुओं ने अपने प्रकाशमय धनों को बिजलित रिया था।

वनस्पति-संसार में कुछ बीबडीरिया तथा फन्नाई प्रकाश उत्पन्न करते हैं। फुकुगमुले या मशरूम (Mushrooms) हरा भीता या नारंगी रंग का प्रकाश उत्पन्न करते हैं।

हम मनुष्यों के शरीरों में जी रेशियों के संकोच के समय बिद्युत्-सम्बन्धी परिवर्तन होता है। इस काल में शक्ति का प्रादुर्भाव व केवल ताप के रूप में ही होता है। जबितु सूक्ष्म परिवारण में बिद्युत् भी प्रकट होती है। यह वैद्युतिक परिवर्तन पेन्नी-संकोच के अघ्यतः काल में प्रारम्भ होते हैं और संकोच-काल के समाप्त होने के पूर्व ही समाप्त हो जाते हैं। डु बोई रेमोण्ड (Du Bois Reymond) ने पेन्नी की बिज्जामात्रता की बिद्युत्-धारा (Current of rest) का अपना एक सिद्धान्त प्रेष किया है। दूसरा एक सिद्धान्त हरमैन का सिद्धान्त (Hermann's theory) है। दोनों ही सिद्धान्तों में अपने अलग अलग आधारों पर मान्य शरीर में इस बिद्युत्-धारा की उत्पत्ति का समर्थन किया है। इसी प्रकार "क्रिया-अव्य बिद्युत्-धारा (Current of action) का सिद्धान्त है। प्रमुख जीव-शास्त्री सर जूलियन हक्सले (Sir Julian Huxley) ने ३१ जुलाई १९१०

१९६ में लिखे हुए अपने एक लेख (Science and God) में एक जगह लिखा है (All physiological activity is accompanied by minute electrical activities, which in a few fish have been intensified and turned to biological use in specially evolved electrical organs) अर्थात् सम्पूर्ण शारीरिक क्रियाओं के साथ सूक्ष्म बिजली के हस्तक्षेप सम्बन्धित होती हैं। जिनका कुछ मछलियों ने, अपने बिजली उत्पादक अंगों को विशेष विकसित कर, शारीरिक व्यवहार में उपयोग कर लिया है।

जो भी हो यह तो निश्चित बात है कि हमारे शरीर का प्रत्येक अणु अपने चारों ओर सभी दिशाओं में, अमर और नीचे की ओर भी अपनी प्रजाति तरंगों की एक अद्भुत धारा बहाता रहता है। यह प्रकाश-तरंगों चारों ओर बहती हुई वहाँ अपने दर्पणों की धाँवों के रेडारों से इकराती है और वहाँ एक "कोरस" में बँधकर उन दर्पणों को उस ऐसे गये व्यक्ति-शरीर का स्पष्ट और दृ-ब-दृ मान कराती है।

मान लीजिये आप एक औरत मँडान में लड़े हैं। आपके ठीक सामने और लगभग दस फुट की दूरी पर एक दूसरा व्यक्ति लड़ा आपकी देख रहा है। उस समय आपके शरीर की थोड़ी से तेरह एड़ी तक के सभी अंगों के प्रत्येक अणु से निगलने वाली प्रजाति तरंगों उस सामने लड़े हुए व्यक्ति की धाँवों की रेडारों पर बहती हैं। रेडारों तब उन तरंगों को पकड़ कर उन्हें धाँव के भीतर एक ओर की ओर लेता है। इस प्रकार वह सब तरंगों एक ही बिन्दु पर

या बुझती हैं। इस बिन्दु को नाभिक (Focus) कहते हैं। नाभिक पर आकर वह सब तरफें असम-असम अपने भौतिक स्रोतों (आपके शरीर के कर्णों) के समुच्चय ठीक जैसे ही प्रतिबिम्ब बिन्दु बना देती हैं। वह सब प्रतिबिम्ब-बिन्दु ही एक साथ मिल जुलकर आपके शरीर का एक सम्पूर्ण आकार बना देते हैं। आपको देखने वाले उस दूसरे व्यक्ति का दृष्टि-केन्द्र सब उसको यह मान कराता है कि वह आपको देख रहा है। प्रकाश-तरंगों को यों भीतर की ओर मोड़कर उनका एक समूह कोच्छ बना देने की क्रिया को 'वर्तन' (Refraction) कहते हैं।

मान लीजिये कि वह व्यक्ति अब आपकी ओर बढ़ा चलकर आपके पास आ गया है। अब वह आपकी ओर मुंह किये हुए ही आपसे केवल एक फुट की दूरी पर खड़ा है। उस समय वह केवल आपके मुंह या कानों के ऊपरी भाग को ही देख सकेगा क्योंकि सब आपके कानों से नीचे के सभी अंगों से निकलने वाली प्रकाश-तरंगें उस व्यक्ति की आँखों के नीचे नीचे से ही निकलती रहेंगी और आँखों की रेटिना पर न आ पायेंगी। आपके उन सब अंगों को वह नहीं देख पायेगा। अपनी आँखों को नीचे की ओर झुकाकर ही वह उनको देख सकेगा क्योंकि सब उन अंगों से निकलकर ऊपर की ओर बढ़नी हुई तरंगों को उसकी आँख की रेटिना पर पहुँच सकेगी और सब ही नीचे के उन अंगों के समुच्चय प्रतिबिम्ब वहाँ कीर्ण में आ सकेंगे।

वास्तव को ध्यान में रखते हुए अब आप जान भी मान लीजिये कि आदर जारों ओर उस स्थान में सबको व्यक्ति जड़े हुए आपकी ओर



हों। कुछ समय ही सूखम बाल और भीतने पर इन्द्रदेवदेव सेकण्ड के बाद ही आपकी वह १० फुट दूर के व्यक्ति देख सकेंगे। आपके शरीर का प्रकाश उन तक तब ही पहुँच पायेगा। २०० फुट दूर पर खड़े व्यक्तियों के लिये तो आप तब भी अदृश्य ही बने रहेंगे। कुछ और अधिक काल बीतने पर इन्द्रदेवदेव सेकण्ड के बाद वह भी आपको देखने लगेगे।

इस काल में इतने बड़े कर्क होने पर भी सभी दूरियों पर खड़े व्यक्ति सभी समझेंगे कि वह सब आपको एक ही समय में और आपके एक ही बिन्दु पर ही देख रहे हैं। परन्तु तब तो यह होगा कि जब तक उन तीनों दूरियों पर खड़े व्यक्ति आपको देखते रहेंगे उनके दृष्टि काल का यह पक्ष निरन्तर बना रहेगा। वह आपके तीन भिन्न कालीन रूप देखेंगे। यदि इन्द्रदेवदेव सेकण्ड के बाद और इन्द्रदेवदेव सेकण्ड के बहिर् आपकी कुछ ही आय और आप अचानक भुल हो जायें तो जो उस काल-काल की अवधि में आपके शरीर के कणों के जिनकी जो कुछ प्रकाश-तरंगों बाहर की ओर फैल गयी हैं वह तो निर्वाय जागे की ओर गहरी बली जायेंगी। अपनी अपनी काल-अवधि में एक सेकण्ड के उठने जागने के कर्क पर वह सब व्यक्ति आपको तब भी देखेंगे जबकि इरीरत यह होगी कि उस समय आप वास्तव में भुल हो चुके होंगे। इस प्रकार आपके और देखने वाले के बीच की दूरियाँ कहीं कहीं बढ़ती जायेंगी त्यों त्यों प्रकाश-तरंगों की वह दूरियाँ बार-बारमें में अधिक और अधिक समय लपटा बना जायेगा। यदि धृन्वी बिन्दुल औरत और सपाट होती और यदि मनुष्य सेकण्डों भीनों तक देखने की सामर्थ्य रखता तो

आपने १८०० मील दूर जाते व्यक्ति को आसानी पहली भ्रमक सेने में इतरे सेकण्ड (एक सेकण्ड का १८१ बी माय) का समय लगता । इसका एक मतलब यह भी हुआ कि जब कभी वह आपकी १८० मील की दूरी से देखेगा तब तब वह आपसे इतरे सेकण्ड पहिले के रूप आकार और हाव भावों को देखेगा । विपुल रूप में बनमान आपका सम्बन्धीन रूप आकार और हाव भावों को यह नहीं देख सकेगा । यदि आप अपने हाव भाव को बन्द भी कर दें तो भी आपके रूपा करने के इतर सेकण्ड बाद तक वह आपकी बीने हाव भाव करते हुए ही देखेगा । आपके लिये जो काम मुग काम की हो चुकी है वह काम उत देखने जाने के लिये इतरे सेकण्ड तक बनमान काम की ही होगी ।

पृथ्वी के अपेक्षाकृत छोटे शायरे की कुछ-सुमि में यह काम कुछ स्पष्ट बकड़ में नहीं जा सकेगी । बीने तो एक सेकण्ड का समय ही इनका समय और व्यय है और फिर उत सेकण्ड के १८६ बी माय के समय की कल्पना करनी तो और भी अधिक दुबह है ।

पृथ्वी के बाहर धर्मस्थ "द्विष" में हम से ६३०००००० मील दूर बसवते हुए सूर्य के सम्पर्क में हम इस बात का एक स्पष्ट और सहज बोध-गम्य बिन्दु बना लेंगे । सूर्य के और हमारे बीच की इन सम्मी दूरी ( ६३०००००० मील ) की बार कर हम तक पहुँचने में सूर्य के प्रकाश को ८ मिनट और २० सेकण्ड का समय लगता है । क्योंकि हम प्रत्येक वस्तु निम्न या मनुष्य को उतके प्रकाश (बादें वह प्रकाश स्वयं उत वस्तु निम्न या मनुष्य का धरना उत्पन्न किया हुआ हो या बादें प्रतिबिम्बित हो) की सहायता से ही देख जाने हैं



घोर क्योंकि सूर्य के प्रकाश की प्रत्येक किरण या तरंग की हम तक आकर हमारी धाँसों से टकराने में ८ मिनट और २० सेकण्ड का समय लगता है, इसलिये हम हमेशा ही वर्तमान काल से ८ मिनट और २० सेकण्ड पहिले के उसके रूप को देखते रहते हैं। सितित्व पर सूर्य के कठ जाने पर भी हम ८ मिनट और २ सेकण्ड तक उसे नहीं देख पायेंगे। ठीक इसी प्रकार जब शाम को सूर्य डलकर पश्चिमी क्षितिज के नीचे जाता जायेगा तो भी हम उसके पों वास्तविक रूप में अस्त हो जाने के ८ मिनट २ सेकण्ड बाद तक उसे देखते रहेंगे। सूर्य के लिये तो उसका यह अस्त हो जाना घुस काल की बात हो चुकी होगी परन्तु क्योंकि उसकी प्रकाश-किरणें अब भी हम तक पहुँच रही हैं और वो बार मिनट बाद तक पहुँचती रहेंगी इसलिये हम उसे तब भी क्षितिज पर देख रहे होंगे-हमारे लिये उसका अस्त होना अभिष्य की बात होगी। हम तब भी क्षितिज की ओर उल्टी लठ्ठकर बह रहे होंगे; 'देखो ! वह सूर्य पश्चिम क्षितिज पर अमर रहा है।'

एक अरब को गुप्त काल है वही दूसरी अरब वर्तमान काल और तिसरी तीसरी अरब अभिष्य काल है। यह बात और भी अधिक स्पष्ट और प्रकर रूप में उभर उठती है जब हम 'क्षेत्र' में सूर्य से और आगे बढ़ते हैं। हमारी अपेक्षा सूर्य से भी बहुत अधिक दूर परन्तु तारों में हमारा अपेक्षाकृत निकटतम पड़ती "प्रोक्सीमा सेंटौरी" (Proxima centauri) नामक तारा है। याव रक्षणा चाहिये कि तारों के नाम हमने अपनी इच्छा पर रख दिये हैं; अन्तर है किसी दूसरे यह के बुद्धिशील निवासी उसे किसी और

नाम से पुकारते हैं। प्रोक्सीमा सेन्टीरी तारा हमने (हमारी पृथ्वी से) ४१४ प्रकाश-वर्ष दूर है। इसका मतलब यह हुआ कि उस तारे से जने हुए प्रकाश को पृथ्वी तक पहुँचने में ४१४ वर्ष लगने हैं। प्रकाश एक वर्ष में २८०० ०० ० ०० ० मील चलता है। इस तरह की ४१४ से गुना करने पर प्रोक्सीमा सेन्टीरी तारे की पृथ्वी से मोलों में दूरी निकल आयेगी। उनसे हमला तारा धाम्मा सेन्टीरी (Alpha cen ouri) हमने ४३ प्रकाश-वर्ष दूर है। बात धिन्तुत वही होगी यदि हम इसको पचटकर धों कहें कि प्रोक्सीमा सेन्टीरी और धाम्मा सेन्टीरी तारों से हमारी पृथ्वी कम्पा ४१४ और ४३ प्रकाश वर्ष दूर है। हमारी पृथ्वी पर स्थित किसी भी एक बस्तु या एक बस्तु के द्वारा प्रसारित प्रकाश को प्रोक्सीमा सेन्टीरी तक पहुँचने में ४१४ प्रकाश-वर्ष लगने। यदि धाम्मा हमारे घर में कोई बच्चा पैदा हो और हमारा ही कोई पुत्रुम्बी वहाँ प्रोक्सीमा सेन्टीरी तारे के किसी घर पर बैठकर एक सामान्य शक्तिशाली दूरबीन से हमारे घर को देखे तो उसे उस बच्चे के जन्म और उसका धर्मिता के कोई समझ नहीं दिखाई पड़ेगा। धाम्मा से टीक ४१४ वर्ष पहिले हमारे घर में जो घटनाएँ या बात-वहल हो गयी थीं वे सब उसकी ही वहाँ बैठकर धाम्मा देखेगा। धाम्मा के जने हुए बच्चे के शरीर की प्रकाश-तरंगें धाम्मा से 'देख' में रहना और चलना आरम्भ करेंगी और ४१४ वर्ष बाद हमारे उस पुत्रुम्बी को यदि वह तब हमारे घर की ओर देख पायेगा, उस बच्चे के जन्म की वहिली समझ देंगी। हमारे तिये जो बच्चा तब तक बड़ा कर उठे में ४ वर्ष और

पीने से महीनों का हो जायगा वह हमारे उस कुटुम्बी के लिये सुरक्षित जगह हुआ होगा। यहाँ तो हम सब बच्चे की बीबी बर्ब गीठ मना चुके होंगे और वहाँ हमारा कुटुम्बी आज उस बच्चे के जन्म की खुशी में अपने इस मित्रों को सह मोज दे रहा होगा।

ठीक इसी तरह जब एक आदमी यहाँ वृष्ठी पर आज के दिन मर चुका होगा प्रोबन्धीमा सेग्टोरी के वासी अपने एक कुटुम्बी के लिये वह न केवल आज अचिन्तु आज से लेकर चार बर्ब और पीने से महीनों तक जीवित हो रहेगा। मान लीजिए, उस आदमी को यहाँ मरे हुए से बर्ब बीत चुके हैं और इस कारण हम उसे भुला बैठे हैं। परन्तु प्रोबन्धीमा सेग्टोरी निवासी उसका कुटुम्बी तब भी अपनी कुरबीन में उसकी आरीरिठ प्रकाश तरंगों को पकड़ रहा होगा और उसे बलते फिरते जलते पीते और सोते पछते देख रहा होगा। उदाहरण के लिये तो वह तब मरेगा जब हमारे यहाँ मरे हुए उसे ४ बर्ब और पीने से महीनों से कुछ सेकण्ड मिनिट या घण्टे और अधिक बीत जायेंगे। उनका शरीर यहाँ वृष्ठी पर उसकी मृत्यु के बाद या तो जला दिया गया होगा या दफना दिया गया होगा और इस कारण उसके शरीर से निकलने वाली अतिव्यक्त प्रकाश तरंगों भी निकल कर 'वेन' में अपनी लम्बी यात्रा पर चल चुकी होंगी।

अब हमारे चार बर्ब और पीने से महीनों के बीत जाने पर वह आदमी प्रोबन्धीमा सेग्टोरी के निवासी उसके कुटुम्बी के लिये भी मर चुका होगा। उसने तब इतने बर्ब बाद उसकी मृत्यु का मतलब मनाया होगा। परन्तु वृष्ठी पर मरे हुए उस मनुष्य के शरीर से उसके दूर जीवन काल भर निकलती रहने वाली अवाज-तरंगों से

आगे 'बेस' में बहती ही जाती जायेगी। आसका सेम्टरी तारे पर या उसके किसी ग्रह पर निवास करने वाले उसके किसी बुद्धिमान के लिये वह तब भी अधिक ही होगा। उसकी दूरबीन पर तब भी पृथ्वी पर भरे हुए उस मनुष्य के शरीर की प्रकाश-तरंगें लुप्त रही होंगी और वह उसे पृथ्वी पर जीवन की तब हरकतें करते हुए देख रहा होगा। हमारे चार वर्ष और बीस चार जड़ियों से कुछ ही अतिरिक्त दिन बीतने तक वह उसे भी जीवन देखता रहेगा।

इसके बाद क्यों नहीं हमारी पृथ्वी और उन उन तारों और उनके ग्रहों के बीच की दूरियाँ बढ़ती जायेंगी त्यों त्यों मृगु और जीवन का वह घर भी बढ़ता जायेगा। राज हंस ६१ (Cygni 61) तारा हमसे १०० प्रकाश-वर्ष दूर है। चार वर्ष और बीस चार जड़ियों के बाद आसका सेम्टरी तारे के निवासी के लिये भी जब हमारी पृथ्वी का वह मनुष्य भर चुका होगा, 'राजहंस ६१' के किसी निवासी के लिये वह तब भी अधिक ही होगा। उसके शरीर की वह प्रकाश-तरंगें 'राजहंस ६१' के उस निवासी की दूरबीन पर तब भी बड़ रही होंगी और वह उस पृथ्वी के भरे हुए आसामी को पृथ्वी पर ही चलने फिरते देख रहा होगा। बस वर्ष और कुछ सप्ताह या छठाईस दिनों के बाद ही 'राजहंस ६१' का निवासी यह जान पायेगा कि पृथ्वी के उस मनुष्य की मृगु हो चुकी है।

उसके बाद मनुष्य की प्रकाश-तरंगें 'बेस' में और आगे बढ़ जाती हैं। ११० प्रकाश-वर्ष दूर पर 'हाइड्र' (Hyades) नामक तारा-समूह आता है। पृथ्वी पर आज जगती मृगु हो जाने पर भी उस तारा-समूह के किसी भी एक ग्रह के निवासी के लिये तो वह

मनुष्य अभी पृथ्वी पर जन्मा ही नहीं है । एक जगह के लिये तो वह अपना जीवन बिताकर मर चुका परन्तु दूसरी एक जगह वह भाये कुछ वर्षों बाद जन्म लेकर अपना जीवन जियेगा ! हमारी पृथ्वी पर जो मात्र १६० वर्ष पहिले बीता चुकी है वह इस उह पर मात्र फिर से अपने नूरे विस्तार के साथ ज्यों की त्यों पटनी शुरू होती है ।

अत-चित्रों के निर्माता और निर्वेद्यक एक पूरे कथानक को अभिनेताओं और अभिनेत्रियों के अभिनयों के आधार पर छोटी कैमेरा द्वारा अनेक छोटे छोटे परन्तु परस्पर सम्बन्धित चित्रों में बाँध कर एक पूरा सञ्च 'सेट' (Set) बना देते हैं । सिनेमाघरों के पर्शों पर सब उस सञ्च या सेट को चाहे जिसनी धार काश में झाँक दर्शकों को दूरा कथानक दिखाता देने हैं । अभिनेता और अभिनेत्रियाँ अवर मर भी जाय तो भी यहाँ पर उनको हँसते वारो बोलते और गर्जित गर्जित की बिटार्प करते हुए देख कर दर्शक पही मानेगा कि वह सारा काम उसके सामने ज्यों का त्यों हो रहा है । वह मरे हुए अभिनेता और अभिनेत्रियाँ जीते जागते व्यक्तियों की तरह ही सारा काम करते हुए दिख चकते हैं । हमारा अपना व्यक्तिगत जीवन भी जिते हम इस पृथ्वी पर जी रहे हैं विलुक्त इसी प्रकार हमारे शरीर के इलेक्ट्रॉनों द्वारा निरन्तर प्रकाश-तरंगों में बदला जाता हुआ हमारे जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त एक पूरा सञ्च या 'सेट' बन जाता है । यह 'सेट' 'धन्य देख' में प्रति सेकण्ड १५६००० फीट की गति से निरन्तर चलता रहता है । वहाँ कहीं "देख" में चले हमारी पृथ्वी की तरह का ही कोई पगुडल वह 'पर्श' (Screen) के रूप में बिल जाता है वही वह हमारे जीवन के नूरे कथानक को उस पर्श

पर देता कर देता है। भले ही हम यहाँ पर जीप फिर भी हमारा यह जीवन-सेट या जीवन-सम्व हमें दूसरी जगह सारी देटाए करते हुए बिजलाता रहेगा।

पृथ्वी पर हमारी मृत्यु हो जाने के बीस लाख वर्ष बाद हमारा यह प्रकाश-तरंगों का सेट ऐम्बोमोडा नामक मीथुरिया के एक ग्रह पर हमें ठीक उसी प्रकार हमने नाचते छिपते रिजलावेया वस्तु भी साथे बमछर करोड़ों वर्षों के बाद किसी धीरे मीथुरिया के ग्रह पर हमारी जीवन-सीता का पुनः प्रदर्शन करता रहेगा। करोड़ों धीरे अरबों वर्षों तक हमारा यह समय जीवन-सम्व या सेट उसने प्रकाश वर्ष दूर के ग्रहों पर हमें समय बनाये रखेगा। निःशब्दे हम सब समय हैं।

ज्ञान किया जा सकता है कि क्या उन ग्रहों पर जीवित प्राणी हैं जो हमारे जीवन-प्रतिमय की समीप बारी जाने पर देख लेंगे। हैं धीरे बकर हैं। इस ज्ञान की पुष्टि में हम कुछ वैज्ञानिकों की रायें पढ़त लिये देने हैं। मास्को की वायल्ले-रुप्रेविच अकादमी ऑफ सायन्स के अध्यक्ष वासिली रुप्रेविच (Vassille kuprevich) ने २४ जून १९६१ के दिन अपनी एक भेंट में कहा था (On the planets we will find new and unknown forms of life The life-forms might be hundreds of millions of years more advanced than earth life forms- It is probable that living beings, possessing a great life force, will be discovered) सर्वाङ्ग। ग्रहों पर हम जीवन के नये धीरे अस्तक प्रजात बन देख



है कि उन पदों के निर्माणों में तो इस 'ओपेकोन' से भी तेजों के गुण अधिक पाहक-सक्ति के संग बना रखे होंगे ।

हमारे वैज्ञानिकों ने दूसरा एक चीर भी प्राथम्यजनक मात्र बना लिया है जो बाड़े जिसकी दूर की "ऊष्मा-तरंगों (Heat waves) को पकड़कर उन्हें हमारे जिहों में परिवर्तित कर देता है । इसका नाम "ईवापोराग्राफ" (Evaporograph) अपना संक्षेप में "ईवा" (Eva) रखा गया है । सन् १९३० ई. में जर्मन वैज्ञानिकों ने सर्व-प्रथम इसका निर्माण किया था । ऊष्मा-तरंगों को पकड़ने की इसकी शक्ति इसकी तीव्र होती है कि यह "हिम-बिन्दु" (Freezing point) से भी नीचे के ताप-मान के समुद्र को पकड़ सकता है । यह तो प्रायः ज्ञात है कि ताप या ताप की तरंगें (Heat waves) "इन्फ्रा-रेड रेडियेशन" (Infra red radiation) ही हैं । जिस उत्तरवी प्रकाश को देखने की हमारी आँखें समर्थ हैं उसके ताल छोटे से नीचे की ओर जो प्रकाश-तरंगें होती हैं उन्हें "इन्फ्रा-रेड" कहते हैं । प्रत्येक चीज बाड़े वह पृथ्वी हो और बाड़े तृतीय कुछ न कुछ ऊष्मा-तरंगों को अपने विषय या शरीर में से निरन्तर छोड़ती रहती है । "ईवा" इन तरंगों को पकड़कर उनके "ऊष्मा-जिहों" में बदल देती है और इस प्रकार इन ऊष्मा-तरंगों की जगह वस्तु का मान करा देती है ।

फरवरी १९५६ ई० के दिन अमेरिका ने जिस "वैंगार्ड दूसरे" (Vanguard II) नामक उपग्रह को "वेस" में या प्रकाश में छोड़ा था उसमें एक विसीपीटर स्वेपर के एक लुप्ततम "इन्फ्रा-रेड" बर्मीमीटर के चारों ओर बनाई हुई एक "मौल्यम प्राज्ञ"



तारों दू-ब-दू होकर लाखों करोड़ों मील दूर के ग्रहों पर निवास करने वाले प्राणियों को ज्यों के त्यों दिखाना होती है ।

यहिले हम टेलीविजन की ब्रह्मिया को समझ लें । टेलीविजन में स्टूडियो के दृश्य को, जिसे प्रसारित या दूरसारित (telecast) करना होता है, बिजली के धातवों में बहल दिया जाता है और इन धातवों को बिद्युत्-धुम्बकीय या रेडियो तरंगों के रूप में प्रसारित किया जाता है । रिसीवर अर्थात् टेलीविजन सेट जब बिद्युत् धुम्बकीय तरंगों को पकड़ कर उन्हें बिजली के धातवों में बहल देता है और ध्वनि में वह प्रकाश में परिवर्तित हो जाते हैं । रिसीवर पर की एक पर्दा होता है उस पर प्रकाश के जलते फिरते चित्रों की प्रतिकृति के रूप में वह प्रकाश दिखाई देता है । यह सारी क्रिया भू जमा एक सेकण्ड के बहुत छोटे से हिस्से में हो जाती है ।

किसी एक चित्र को प्रसारित करने से यहिले उसे छोटे छोटे टुकड़ों की एक श्रेणी में तोड़ना पड़ता है । कोई चित्र इस रीति से कटे तोड़ा जा सकता है इसकी कुछ कारण बनाने के लिये आप किसी अक्षर के चित्र को गौर से देखिये । ध्यान से देखने पर पता लगेगा कि यह चित्र छोटे छोटे बिन्दुओं की एक के बाद एक बनी हुई श्रृंखला से बना है । कुछ बिन्दु बड़े हैं, कुछ छोटे । बहुत सारे बड़े बिन्दुओं के मिलने से काला क्षेत्र बनता है । छोटे बिन्दुओं के मिलने से लाल रंग बनता है ।

यदि इनमें से प्रत्येक बिन्दु को एक बिजली-धातव में बहल दिया जाय (बड़े बिन्दुओं के लिये प्रबल धातव और छोटे बिन्दुओं के लिये हल्के धातव) तो उस चित्र की दूर सारित या टेलीकास्ट

करने की विद्या में रहना। कर्म पूरा हो जायगा। छोड़ी देर के लिये  
 याम तीर्थदे कि बिजली-बाजेनों में बहलने वाले जयकराण की हम  
 'विष्णु परिवर्तक' कहते हैं। बिज को दूरतारित या डेलीविजन  
 करने के लिये विष्णु-परिवर्तक बिज के ऊपरी बाँए हाथ के मोमे से  
 काम शुरू करता है और विष्णुओं की ऊपरी पंक्ति पर चलता है।  
 बायीं बारी से प्रत्येक विष्णु को घाबेनों में बहलना हुआ वह परिवर्तक  
 कभी कम से नीचे की सभी पंक्तियों के विष्णुओं को भी बहल देता है।  
 एक एक पंक्ति की पूरा कर चुकने पर वह विष्णु परिवर्तक दूर कर  
 बाँईं ओर आ जाता है और दूसरी पंक्ति पर चलने लगता है। यह  
 चले ही होता है जैसे पुस्तक पढ़ते समय पुस्तक के पन्नों की पंक्तियों  
 पर बावरी दाँवें चलती हैं। धीरे धीरे बाँईं ओर से बाँईं ओर चले हैं  
 और पुह के नीचे की ओर एक एक पंक्ति उतरते जाते हैं।

जब विष्णु-परिवर्तक एक के बाद दूसरे विष्णु की बिजली  
 घाबेनों में बहलता जाता है तब ऊपर रितीवर पर आपका डेलीविजन  
 सेट इन कम-आधिक लोचता के बिजली-घाबेनों को छोटे बड़े घाबाराँ  
 वाले 'विष्णुओं' में बहलता जाता है। यह जिया इसनी तेजी से  
 होती है कि यह जब विष्णु निकलकर डेलीविजन सूक्ष्मों में हो रही  
 जिया का चलता फिरता बिज प्रस्तुत कर आपके सामने रख देते हैं।

यह विष्णु-परिवर्तक एक विशेष प्रकार की हलैकट्रन कण्डू  
 होती है। इसकी घनेक बिस्में होती है जिसमें एक विश्व घाबराँ  
 रकोण होता है। इसमें तीन आवश्यक भाग होते हैं— बहिमा मोतेइक  
 दूसरा कतेककरदिम और तीसरा डेलीविजन।

मोतेइक एक कण्डू की प्योर होती है जिस पर हाथुनेविज ब

प्रवासक इन्धन कहा रहता है। प्रवासक इन्धन के एक तन पर बीसों की छोटी छोटी साबुन बूँदें या घोलकण होते हैं। इन कणों में से प्रत्येक पर सीजियम बीसा एक निश्चय परावर्त कहा रहता है। इस प्रकार बीसी का प्रत्येक कण बहुत छोटे कोटो-अणु की तरह काम करता है। नौगैरक ऐसे छोटे छोटे साबुन कोटो-अणुओं का बना होता है।

जब किसी कोटो-अणु पर प्रकाश पड़ता है तब उससे इलेक्ट्रान छूटते हैं। प्रकाश जितना अधिक लोच होना उतनी ही अधिक इलेक्ट्रान छूटेंगे। क्योंकि यह इलेक्ट्रान 'आण बिद्युत् आवेश' के होते हैं इसलिये इलेक्ट्रानों के आने जाने पर कोटो-अणु पर "धन-आवेश" (Positive Charge) रह जाता है। इस कारन मोसैडक पर डाला गया बिजल धन-बिद्युत् के आवेशों की एक प्रतिकृति में बदल जाता है। इस बात को हम यों भी कह सकते हैं कि वह बिजल तब बिद्युत्-आवेश के विभिन्न आवेशों वाले 'विद्युत्' के रूप में दृढ़ गया है।

कोटो-अणु द्वारा छोड़े गये इलेक्ट्रानों को कैथोड पर रोक दिया जाता है। इस प्रकार वह आइसोटोप से दृढ़ करते हैं।

इलेक्ट्रान-धन में एक तन्तु और एक ज्योती होती है जिसमें एक छोटा छेद होता है। तन्तु वही इलेक्ट्रानों के धीरे के रूप में काम करता है। इस तन्तु से इलेक्ट्रान तब विभाजित में पड़ते हैं पर उनमें से अधिकतर को लीड पकड़ लेती है। फिर भी उनमें से कुछ तो उस छेद में से निकल जाते हैं— ठीक जैसे ही जैसे चलते हुए बत्त के सामने रखे हुए बरों के छेद में से कुछ प्रकाश निकल जाये। यह बात की तरह यहीन इलेक्ट्रान-प्रवाह एक धुमर है। तन्तुकोल पर रखे

हुए दो जेट-समुहों द्वारा एक बार एक ओर, और फिर दूसरी ओर मोड़ा जाता है।

पहिना जेट-समुदाय इस इलेक्ट्रन-प्रवाह को ऊपर और नीचे मोड़ता है। यह मोड़ने की क्रिया जेटों पर कम और बहुत विद्युत् धाराओं की विभिन्न विभिन्न मात्राएँ रख कर रखा की जाती है। उदाहरण के लिये यदि ऊपर की जेट पर एक कम-धारायुक्त और नीचे की जेट पर एक बहुत धारायुक्त रखा जाये तो इलेक्ट्रन प्रवाह (जो बहुत धारायुक्त के इलेक्ट्रनों का बना हुआ होता है) निचली जेट से ऊपर की जेट की ओर मुड़ता। यदि कम और बहुत धारायुक्तों की मात्रा कम अधिक करदी जाय तो इलेक्ट्रन-प्रवाह को विभिन्न मात्राओं में ऊपर या नीचे की ओर मोड़ा जा सकता है।

दूसरा जेट-समुदाय इलेक्ट्रन-प्रवाह को बाई या बाई ओर मोड़ता है। इस प्रकार ध्यान देकर हैं कि दोनों जेट-समुदायों के विद्युत्-धाराओं को कम-अधिक करके इलेक्ट्रन-प्रवाह को मोटेइक के किसी भी भाग तक बिना जा सकता है।

इस प्रकार इलेक्ट्रन-प्रवाह को मोटेइक के ऊपरी भाग कोने से प्रारम्भ किया जाता है। यह छोटी धाराओं की पहिली पंक्ति बाई ओर से बाई ओर चलता है। फिर बाई ओर लीडर ओर दूसरी पंक्ति पर चलता है। इस प्रकार यह नीचे मोटेइक पर चलता जाता है।

ऐसा करने का यह प्रयोजन है कि प्रत्येक हुँतने प्रवाह के धारी से इलेक्ट्रन फिर बाह्य करार दिये छोटी-छोटी है एक टकराने पर छोड़े वे। जान लीजिये।

हैं। वे जनकीले घीर नु यमि विद्यु प्रतिबीह पर्व पर डेलीकास्ट किये जाने वाले हृष्य का चित्र बना देते हैं।

प्रति सेकण्ड १ चित्र बनाने के लिये सारा यहाँ एच सेकण्ड में ३० बार डका जाता है। हमारी धीर्य घपनी हृदि-बद्धता के कारण इन चलत चलन चित्रों को मिसाकर टेलीविजन के स्टुडियो में हो रहे कार्य-व्यापार का चलता फिरता हुआ हृष्य बना लेती हैं।

हमारे अपने कपड़ों से निरन्तर ब्रवाहित होती रहने वाली इलेक्ट्रन-तरंगों के एक पुरे समूह या 'सेट' (Set) के रूप में हमारे सबके घमर बने रहने की जित बात को हमने यहाँ बताया है वह बहुत कुछ टेलीविजन की प्रक्रियाओं से मिलती जुलती है। टेलीविजन के प्रियप्रमक पुरुषों को, जिन पर हमने ऊपर विस्तार से प्रकाश डाला है, अपनी जाति समझ कुछ लम्बे वर मनुष्य-प्ररीरों की घमरता की बात सरलता से समझी जा सकती है।

बीनों के सिङ्गल एच हैं बीर बीनों की प्रक्रियाएँ इलेक्ट्रनों के एक समान आवार वर ही काम करती हैं।

इलेक्ट्रनों की इन प्रकाश-तरंगों को, जो हमारे प्ररीरों से निरन्तर बाहर की ओर चलती रहती हैं एक चलत प्रवाह के रूप में निरन्तर बहते रहने की शक्ति 'दिश' में जीमूद चुम्बक-बीरों (Magnetic fields) से मिलती रहती है। यदि आपने किसी विद्युत जनरेटर (Electric generator) की बेजा हो तो घाब घान चुके होंगे कि जल जनरेटर से बिजली का (या इलेक्ट्रनों का) क्योंकि इलेक्ट्रनों के प्रवाह की ही बिजली बहते हैं) प्रवाह बँदा करने में क का उपयोग किया जाता है। यह एक सर्व-सम्मत तथ्य है कि

बुम्बक-बीज इसेकडुनों की गति प्रदान करते हैं। हमारी पृथ्वी एक विज्ञान बुम्बक की तरह घाबरण करती है। एक बुम्बकीय बीज इसे चारों ओर घेरे हुए है। वॉन एलेन (Von Allen) और उनके कुछ सहकारियों ने पृथ्वी की ओर बिना स्पुटनिक और स्थूलिक नामक मानव निर्मित उपग्रहों ने यह पता लगाया कि पृथ्वी के चारों ओर के इस बुम्बकीय क्षेत्र में बी 'बेल्ट' (belt) है जिसका एक डो केन्द्र है। बाहरी पट्टी जहाँ पृथ्वी की तरह से २० हजार कीलोमीटर से लेकर ६० हजार कीलोमीटर की ऊँचाई तक फैली हुई है वहीं भीतरी पट्टी का फैलाव ६०० से लेकर ६ हजार कीलोमीटर तक है। भीतरी पट्टी में जहाँ कम-बिछनु धातु के प्रोटनों की बहुतायत है वहीं बाहरी पट्टी में जहाँ-बिछनु धातु के इसेकडुनों की। हमारी पृथ्वी के बाहर निकलती हुई हमारे शरीर की इसेकडुन तरंगों को यह बुम्बक-बीज एक घसाघरण तेज बरछा मार कर उनकी धाँसे जाने की गति में बुझि कर देता है।

ज्योतिर्वैज्ञानिक यह जान गये हैं कि सूर्य एक साधारण तारे का तारा है और हमारी पृथ्वी एक साधारण तारे का ग्रह। इसका मतलब यह है कि हमारी पृथ्वी को यह एका-बिचार नहीं मिलता हुआ है कि केवल वही धरणा बुम्बकीय-बीज रहे। बहुत सम्भव है कि बिना में लाखों करोड़ों ग्रह उपग्रह अपने अपने बुम्बक-बीज रखते हों। इन ग्रहों के पास से या उनमें होकर गुजरती हुई इसेकडुन-तरंगों को वहाँ वहाँ के तारा और नये धरके पृथ्वी इस कारण नहीं पतियाँ मिलती रहती हैं जिससे वह 'देन' में धाँसे की ओर अपना सफर जारी रख सके।

अब बीजा और अन्तिम कथ में निर्णायक प्रश्न, यह होगा कि

यदि यह मान भी लें कि "दोश" में लाखों करोड़ों भीत हुए एनेक  
 यहाँ पर हम बीसे या हमसे भी अधिक बुद्धिमान प्राणी रहते हैं और  
 यह भी कि एक-एक बात सुख्य प्रकाश-तरंगों को बहावने वाले उपकरण  
 भी हैं फिर भी क्या किसी ने कभी इलेक्ट्रॉन-तरंगों या प्रकाश-तरंगों  
 के एक पूरे 'सेट' में बीबी हुई मृतकालीन मामलों बदमाशों को  
 प्रपन्न देखा भी है ? जिन बहुत संघट हैं और मानव की प्रचुरता  
 के विषय में हमारे द्वारा पेश की जा रही इस स्वात्मना के मध्या  
 समय पर एक निर्धारित प्रभाव डालने वाला है । इस प्रश्न के उत्तर  
 में हम एक ऐसी सच्ची घटना का उल्लेख कर रहे हैं जब यूरोप की  
 दो विभिन्न महिलाओं ने अपनी इसी देह में लगभग १२२ वर्ष पूर्व  
 के काल को अपनी आँखों के देखा था । उनकी व्यक्तिगत दृष्टियों ने  
 प्रतीत के जाने और दुर्भाग्य वर्षों की बीर कर सन् १७५१ ई० के  
 जेम्स रायसहल में एक दिन बीते हुए एक दृश्य को देखा था । ए  
 एम फिलिप्स (A. M. Phillips) के लिखे हुए एक लेख के  
 आधार पर हम इस घटना का बुरा विवरण दे रहे हैं ।

इस घटना को प्रत्यक्ष देखने वाली इन बीनों महिलाओं के  
 नाम क्रमशः निम्न ली गये हैं जोबर्न और मिड एनेनोर एफ् जोर्डन  
 ने । निम्न जोबर्न सन् १५५६ ई० में वास्तफोर्ड के लेफ्ट ह्यूस  
 कालेज की प्रबन्धनाध्यायिका थी । उन्होंने सन् १६१३ ई० में अपने  
 बह से इरतीया विवाह था । निम्न जोर्डन कुछ वर्षों तक उसी कालेज  
 में अप प्रबन्धनाध्यायिका की थीर मिशमोबर्न के इरतीया ने ॥ के  
 बाद बड़ी प्रबन्धनाध्यायिका बन गई थी । सन् १६२४ ई० में उनका  
 देहान्त हो गया । जेम्स भाषा के अपने मित्र ज्ञान के बल पर

प्रथम विश्व-युद्ध के दौरान में तत्कालीन ब्रिटिश सरकार ने उनकी सेवाएँ भी प्राप्त की थी।

इस घटना सन् १६-१७ ई० को विश्व मोवमेंट और जित्त ब्रोजेन के प्रान्त की राजधानी पैरिस के पास बार्सई की घाटा की थी। प्रान्त के ब्रोजेन बंध के सजाओं ने अपने राज्य काल में बार्सई में अपने बहुत कमवाये के घोर वहाँ रहा करते थे। उन दोनों महिलाओं में से किसी के भी उस दिन के बहिर्गते कभी भी बार्सई या त्रिपुनन नहीं देखा जा। बार्सई पहुँचकर उन दोनों ने एक उद्यान में स्थित राज-प्रासाद "प्रेक्षित त्रिपुनन" की देखने का विचार दिया। यह राज-प्रासाद मेरी पुस्तोइने, जो सुई सोलहवें की राजी थी, का विषय विहार-नपल था।

बार्सई के महल के बाहर निकलकर वह दोनों महिलाएँ त्रिपुनन से घाटे बढ़ीं। उन्होंने वही रास्ता छोड़ दिया और एक बलिपारे में बढ़ती चली गयी। इस बलिपारे से होकर वे राज प्रासाद के चित्तवाड़े की विद्युत्त कुलमाड़ी में पहुँच गईं।

इस बलिपारे में ही उनका उन घाटा की घाटी-सिक्क घटनाएँ बिलगी घुड़ हुईं। यही पर उन्होंने किसी मरान के मजदूरों के घाटे घाटी-सिक्क के साथ एक बड़ा सा हल रखा हुआ देखा। यहीं पर उन्होंने हरे रंग की बर्बियाँ और तिरोने हेड बहिर्गते हुए दो बहरेवारों को देखा। रास्ता बूझते वर उन दोनों घाटी-सिक्क के उन महिलाओं को लीचे घाटे जाने की कहा।

दोनों घाटी-सिक्क बर्बियाँ घाटे बढ़ती गईं उन्हें लगा कि मार्गों घाटा दिन बढता जा रहा है। उन्होंने अपने घ-वर एक कभी-क



घाते करते हुए कुछ महत्वपूर्ण लोगों की भाषाओं सुनीं। आस-पासों में धीमे धीमे निकलते हुए संगीत की स्वर-महुरी सुनीं। बाद में उसने बाद करके उस संगीत की कुछ कड़ियाँ लिख भी लीं। इन कड़ियों के बारे में प्रसिद्धिप्राप्त विद्वानों ने कहा कि ऐसा संगीत आकारहीन सवों के अस्तित्व और जमीनतों सवों के प्रारम्भिक काल में प्रचलित था।

फिर, लगभग दो साल तक जिस जोर्डन कई बार विप्लवम गई, लेकिन बार बार झूठ कर जो वह उन रास्तों का पता नहीं था लकी जिस पर वह सन् १९०१ ई० में चली थी और न वह जमान ही था लकी जिसमें उसने संगीत सुना था। जिस जोर्डन ने इन घटनाओं की सूचना जिस मोबल्ले को दी और १९०४ ई० की बार बुलाई को दोनों महिलाएँ फिर विप्लवम के साथ में पहुँची कि एक बार फिर वह अपनी अपनी यात्रा के अविस्मरणीय सुझों का पता लगा सके। समर उन्हें असफलता ही मिली। वे रास्ते, वह पहल, वह पुनः जमान, उद्यान-सभी नायक हो चुके थे और उनकी जाह्न पर नये भूल के, नये रास्ते के, नयी कुलवाड़ियाँ थीं। जो इन्हीं उन्होंने देखे थे वह या तो कभी नहीं के ही नहीं और यदि वे तो सब उन्हें जमीन मिलत गई थी आसमान का बुका था।

बारीकी से जोड़ लिये जाने पर ऐतिहासिक तथ्यों से यह पूरी तरह सिद्ध हो गया कि सन् १९०१ ई० में जिस मोबल्ले और जिस जोर्डन ने विप्लवम के जिस उद्यानों का जो इन्हीं देखा था— वह लकी कर में सन् १९०६ ई० में कायम था। इस यात्रा और बाद में की नयी मोबल्ले के लिये कायमान अंता कि पहिले भी लिखा था बुका है, जोर्डन जाह्नरी में सुरक्षित रखे हैं। यह सब ध्यानहीन

देरिस् के "अर्थव्यवस्था नियन्त्रित" और "विनिमयीय नियन्त्रित" में की गयी थी, जहाँ उन तारों तिथियों की सूची और प्रत्येक तिथि पर मिल जोड़ने के हस्ताक्षर हैं अब अब यह जहाँ अपनी ओर के लिखे गयी थी।

सन् १९०८ ई० में एक बार फिर मिल जोड़ने को अतीत में वापस करने का अनुभव हुआ। यह अनुभव भी वैसे वही समझाते में हुआ। इस बार भी वैसे लगा कि "उसके घर घर और बाहर की परिवर्तितियों में कोई विविध और प्रमुख परिवर्तन होने लगा।" उसे अनुभव हुआ जैसे "यह अचानक किसी अन्य स्थान पर पहुँच गई है और यह स्थान भी प्रबल वास्तव में तब है।"

एक बात और है जो मिल जोड़ने की पुस्तक "एन एडवेंचर" के अन्तिम कुछ पर लिखी हुई है। सन् १९१४ ई० में दोनों दिनों की बेट एक आन्तरी परिवार से हुई। यह परिवार सन् १९०७ और १९०८ ई० में बर्लिन में यह पुरा था। इस परिवार के लोग भी प्रियम के साथ में गये थे और उन्होंने जो आन्तरीय परिवार देखी थी। इन लोगों ने भी बहुत निया या कि यह यह घर प्रियम के रूप बन जाते हैं और जहाँ की तारी प्रेमनी जैसे अतीत के घर घर में पुनर्नि हो जाती है।

इन बातों के अतिरिक्त उन परिवार के व्यक्तियों ने प्रियम में "विविध स्थितियाँ और बाध में समीप को लहरें लीनी लगी थी" और उन्हें लगा था जैसे कि यह पूरा स्थान विद्युत्-संचालित है। यह बात मन पर "एन एडवेंचर" की मेसिकल्लों के तिथि-व्यवस्था

देखना शुरू किया और उन्हें पता लगा कि सन् १९०१ ई० को इस अन्तर्गत के दिन सम्पूर्ण यूरोप में एक विद्युत्-सूक्ष्म प्रकाशित हुआ था।

सन् १९१२ वर्ष पहिले आर्साई के राज-महल में एक दिन जो घटना बह चुकी थी वह और उस राज-महल के आस पास के उद्यान भरना पुनः और समस्त सबके सब जिन इलेक्ट्रन-तरंगों के रूप में परिचलित होकर अन्तर्गत 'वेस' (Space) में अपनी लम्बी यात्रा कर चल चुके थे उनको वह विद्युत्-सूक्ष्म (Electric Storm) किसी प्रकार अपनी जेब में बन्दू लाया जा और मोसमी लकी की दो महिलाओं को उन सब की एक प्रत्यक्ष झलक दे दिया था।

पानियों की मोसम की जिसदिलाली रूप में अनेक व्यक्तियों को आकाश में बड़े बड़े महल और कभी कभी लकी हुई चीजें देखने को मिली हैं। लोगों ने उन्हें 'मरीमिजार्स' (Mirages) कह कर होती ये डाल दिया है। क्या वह सब आतीत के अन्तर्गत के यन्त्रों जीवन बिना तो नहीं वे जो आकाश से सीधों वर्ष पहिले कृष्ण पर भीम्वर के और उसके बाद इलेक्ट्रन-तरंगों में परिचलित हो गये थे। सम्भवतः कोई अतिशय अति-आनी विद्युत्-सूक्ष्म उन्हें रिती दूर 'वेस' में बाधित बन्दू लाया हो और उन व्यक्तियों को उन्हें दिखा दिया हो।

कृष्ण की सब वस्तुएँ, लकीय और अलीय सब, निरन्तर इलेक्ट्रन-तरंगों में परिचलित होती रहती हैं। अपने भौतिक अस्तित्व की दृष्टांत से निकर उस अस्तित्व की अन्तर्गत तक सब वस्तुओं का

एक छद्म शृङ्खला-बद्ध जीवन-सम्य ( Life-set ) इन इलेक्ट्रन तरंगों में बँधा हुआ समस्त 'वेद्य' में न आनुम कित मन्त्रिजन पर पुरुषों के लिये निरन्तर घायी घोर घायी बसता रहता है । सबसे हमारी यह पुन्वी बनी है सब से वह अपनी कहानी को इन इलेक्ट्रन तरंगों में बाँध कर पृथु घोर विनाश की शुरुआत के बाहर समस्त 'वेद्य' में सुरक्षित रखती चली आई है । पुन्वी की इस समय कहानी में पहाड़ों नदियों पेड़ पौधों घोर भूमि-सत की स्थिति-गत कहानियों के साथ साथ कुछ हुई प्रत्येक मनुष्य की जीवन कहानी अपने अपने घटन रूप में इलेक्ट्रन-तरंगों को कभी न मिलने वाली स्थाही में लिकी बाहर सब सब के लिये समय बन चुकी है । पृथु पर मनुष्य की यह एक सहज विषय है— कोई उपस्था, कोई साधना और कोई प्रयास लिये बिना विषय ।

विश्व-प्रसिद्ध वैज्ञानिक आचार लिन्डने ने अपनी पुस्तक 'ऑन दी एज ऑफ़ी एस्तोथेटिक' (On the edge of the esthetic) में १० दिसम्बर सन् १९२३ ई० के दिन लिये गये अपने एक प्रयोग में एक घातमा की बोट का चित्र करते हुए लिखा है कि उस घातमा ने साँहूँ बतलाया कि धरने के बहिर्ने उसका घरीर कित रूप में बा डीक रही रूप उसका तब भी (घातमा के रूप में) था । उसके हाथ पर, सिर इत्यादि उती प्रकार थे । धरने के बहिर्ने उनका सूक्ष्म घरीर उसके स्थूल घरीर में मिला हुआ था । अब वह पुनः हो गया था । उस घातमा ने यह भी बतलाया कि स्थूल घरीर के न होने पर भी उसकी आकृति रूप, चिह्न तथा आकार विस्तृत स्थूल घरीर के ही थे । घातमा के रूप में उसकी चालने की गति बहुत तेज थी ।

धार्म्यात्मिक क्षेत्र की जानकारी में बहुत अधिक प्रागे बढ़े हुए भारतीय विद्वानों और वैज्ञानिकों ने भी प्रत्येक जीवजाती के इन दोनों शरीरों, सूक्ष्म शरीर और सूक्ष्म शरीर-के अस्तित्व को मानकर मृत्यु के उपरान्त उक्त जीवजाती के सूक्ष्म शरीर के सनातन अस्तित्व को माना है। सूक्ष्म शरीर को ही उन्होंने आत्मा माना है। इसे बहुत प्रकाश-तरंगों के रूप में विद्यमान जीवन-सूत्र (Life-set) ही सूक्ष्म शरीर या आत्मा है।

कारण के अनुकूल कार्य होता है और पिता के अनुकूल पुत्र। प्रकृति स्वयं अमर है अविनाशनी है और सनातन है। निश्चय ही ऐसी प्रकृति केवल ऐसे विश्व-अवस्था को ही जन्म दे सकती है जो अमर हो, अविनाशी हो और सनातन हो।

प्रकृति का ही दूसरा नाम शक्ति है। हम सब शक्ति की ही सन्तान हैं— शक्ति के ही विविध रूप हैं। भौतिक विज्ञान का एक स्वयं सिद्ध है: (Energy never dies) अर्थात् शक्ति का कभी ह्रास नहीं होता । वह अक्षय्य बनी रहती है। अपने भौतिक रूपों को वह अवश्य बदलती रहती है— कभी एक रूप और कभी दूसरा। शक्ति चाहे जितने रूप बदले उसके मूल गुण में कोई ह्रास नहीं होता।

हम सब इस विश्व-शक्ति के अमर पुत्र हैं। धात्र से हमारे बर्ष बहिले मातृ के तप-पुत्र अर्थात् इस विश्व-सत्य का साक्षात्कार कर चुके थे तभी वह वह वह लके थे 'नृणां तु विज्ञे अमृतस्य पुत्रा ये ये धामानि विद्यानि तस्य'। 'हे अमृत (शक्ति या इसे बहुत प्रकाश तरंगों के पुत्रों) ! तब तब जो विद्या (अवस्थाएँ) जानों या रूपों में

मत होगये हो चुको ।

हम सब समुदाय के पुत्र एक घर में याता-यात के अधिक हैं ।  
 सारा सबका एक ही पन्तल्य पाय है । सबकी एक ही मंजिल है ।  
 सारी इत मंजिल की लेकर अपने-अपने गतिविधियों की ओर  
 दृष्टियों ने अपने-अपने अलग-अलग मत दिए हैं । कोई नहीं बता सके  
 कि हम इस दुनिया में कहाँ से आये हैं और कहाँ जायेंगे । यह तो  
 एक निश्चित बात है कि हम सब तो जाकर रहे हैं । मेसिन डेन्स  
 के शास्त्रों में 'हम प्रयासी हैं और जितना यह घर का रहे हैं उस  
 घर के एक समुदाय हैं । हम चले हैं, दूर रहे हैं परन्तु बात के प्रयास  
 हैं अनुसार कोई जितनी देर दूर रहता है उतनी ही देर । "

ये घर अपना विशाल तो यह है— और आपस आपस बातकर  
 प्रविष्ट में किसी दिन विज्ञान की अपनी सम्य-परक प्रणामियों के  
 बात पर इसे पूरा भी करे— कि विश्व-व्यापक में भीतर भावों यह  
 हमारी पुष्पों की तरह ही अपने अपने बुद्धि-क्षेत्र रहते हैं । यह  
 सब बुद्धि-क्षेत्र अपने अपने यह के "संसाधन-क्षेत्र" (Catch-  
 ment areas) की हैं । अलग-अलग "क्षेत्र" में एक अलग सब की  
 याता-यात पर चले हुए हमारे समस्त इतिहास-तरंगों के पूरे 'मेरों' की  
 सब सब यह उन उन बुद्धि-क्षेत्रों के पास से होकर गुजरते हैं, यह  
 क्षेत्र कुछ काम के लिये अपने अपने क्षेत्र में चला लेते हैं और अपनी  
 बुद्धि-क्षेत्र शक्ति का एक प्रयास करता कर उन्हें अपने अपने  
 घरों की ओर दृष्टि देने हैं । उन उन घरों के बाध-प्रणयन की लेंगे  
 और उनके मुक्त सब हमारे 'उन इतिहास-तरंग मेरों' की अपने में  
 बसा कर हमें अपने अनुमान शक्ति सब देकर अपने यह क निराश

विश्व की घाति शक्ति (Energy) ही प्राणियों को, सोरों को और सब विद्यार्थों प्रविशार्थों को सम्पूर्ण रूप से ध्यात कर श्रुत (विद्युत्-चुम्बकीय क्षेत्र Electromagnetic field) से सर्व प्रथम उत्पन्न होने वाले इलेक्ट्रॉनों के माध्यम से आत्मा (इलेक्ट्रॉन तरंगों (Electron-waves) में प्रविष्ट हो गई।

वर्तमान-वर्तों में आत्मा का जो स्वरूप और उसके जो धर्म बतलाये हैं वह सब ज्यों के त्यों इन इलेक्ट्रॉन-तरंगों के स्वरूप और धर्म हैं। शुक्ल यक्षुर्वेद का एक श्रुति 'मन' (आत्मा) के स्वरूप का वर्णन करते हुए कहता है 'मत्प्रज्ञानमुत श्रुतिश्च यद्व्योति रन्तरमृतग्रजामु' अर्थात्, जो मन या आत्मा प्रज्ञान स्वरूप है, चित्तिशक्तिमुत् या अतम्य स्वरूप है, सम्पूर्ण विश्व की धारण श्रुति है और जो सब प्राणियों के अन्तर वर्तमान व्योति-स्वरूप और अमृत-धर्म है।"

बृहदारण्यकोपनिषद् के श्रुति याज्ञवल्क्य ने बड़े-बड़े जनसं को आत्मा का स्वरूप बतलाते हुए कहा था "कथमप्रमेति योऽयं विज्ञानमयः प्राणो ह्यन्तर्गोति शुक्ल" अ समानः सानुजीलोरा अनुवाचरति — अति शक्ति मृत्योः श्रुति ( अन्त्या ४ ब्राह्मण १ मन्त्र ७ ) अर्थात्, जनसं के यह पुष्टि पर कि आत्मा कीन है, याज्ञवल्क्य ने कहा जो यह विज्ञानमय है और प्राणों में एवं हृदय में अन्तर्गोति व्योति है वह व्योतिर्भय शुक्ल अपने एक ही समान रूप में (व्योति रूप में) रहता हुआ दोनों सोरों (पृथ्वी पर और ऊपर अन्तर्गोति 'Space' में) लंबरूप करता है और पुरुष के शरीर को जीव जाता है।





विद्युत की आवृत्ति शक्ति (Energy) ही प्राणियों को, लोको को और सब विसाओं प्रदिशाओं को सम्पूर्ण रूप से व्याप्त कर भूत (विद्युत्-चुम्बकीय क्षेत्र Electromagnetic field) से सब प्रपन्न उत्पन्न होने वाली इलेक्ट्रॉनों के नाचनम से आत्मा (इलेक्ट्रॉन तरंगों (Electron waves) में प्रविष्ट हो गई।

वर्तमान-कालीन वै आत्मा का जो स्वस्वयं और उसके जो बर्ण बतलाये हैं वह सब क्वी के लो इन् इलेक्ट्रॉन-तरंगों के स्वस्वयं और बर्ण हैं। दुसरा पदुवैर का एक शक्ति 'मन' (आत्मा) के स्वस्वयं का बर्णन करते हैं कहता है 'अप्रज्ञानमुत वैतो वृत्तिरव यज्जगति रततमृतमप्रज्ञानं' अर्थात्, जो मन या आत्मा प्रज्ञान स्वस्वयं है, चित्तिदात्मिकता या वैतन्य स्वस्वयं है, सम्पूर्ण विश्व को धारण किये हुए है और जो सब प्राणियों के अन्दर वर्तमान ज्योति-स्वस्वयं और अमृत-बर्ण है।

ब्रह्मदारभ्यजीवनिश्च के शक्ति याज्ञवल्क्य ने वैदिक जनक को आत्मा का स्वस्वयं बतलाते हुए कहा था "कतम आत्मैति वीर्यं चिदानमया प्राणेषु ह्यद्यतर्ज्योतिः पुण्यं स तपसाः सम्पुत्रीतीका वगुर्नवपति — अस्ति जगति मृत्योः दृष्टिः (अमृतम् ४ ब्रह्मण १ मन्त्र ३) अर्थात्, जनक के यह वृत्ति पर कि आत्मा जीव है, याज्ञवल्क्य ने कहा जो यह चिदानमय है और प्राणों में एवं हृदय में घन्तवती ज्योति है वह ज्योतिर्नय पुरुष अपने एक ही समान रूप में (ज्योति रूप में) रहता हुआ लोगों लोको (पृथ्वी पर और ऊपर अन्तः केम् Space में) संवरण करता है और पुनः के लोको को लाये जाता है।

आप धीरे में एक दूसरे को अपनी आँखों की रेटिना पर पड़ी हुई आपके धीरे मेरे शरीरों की इलेक्ट्रॉन-तरंगों की प्रतिबिम्बिता के रूप में देखते हैं। इस बात को एम्बेडोपोनियस के एक श्रुति में मिलने लक्षित धीरे सुन्दर रूप में व्यक्त किया है— “एपोलिनि एपो ह्ये एव आस्मेति होवाचितमृणमनयमेतद्वा त्रि” (अम्माय ८ अङ्क ७ मन्त्र ४) यह जो आँख में पुरुष दिखता है वह आत्मा है वह अमृत है वह अमय है धीरे वह ब्रह्म है।

धीमङ्गुगवर्नीता में योपीरर भीष्टु ने आत्मा की अविनश्यता का प्रतिपादन करते हुए कहा है: “य स सर्वेषु ज्ञेतेषु मरयत्तु न विनश्यति” अर्थात् सब मूर्तों (प्राणियों) के नष्ट होने पर भी नहीं नष्ट होता है। आगे चलकर उन्होंने इस ज्योति-स्वरूप का वर्णन करते हुए कहा है: ज्योतिरानि तन्म्योतिः तमसः परं भूयते। ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं ब्रुहि सर्वस्य विष्टितम्” अर्थात् वह आत्मा ज्योति यो (प्रकाशहीन बिन्दु) आप इत्यादि का भी ज्योति है एवं इस कारण अन्वहार से परे कहा जाता है। वह जीवस्वरूप धीरे जानने के योग्य है एवं ज्ञान से ही प्राप्त होने वाला धीरे सबके हृदय में स्थित है।

सत्य रज धीरे तम (इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन धीरे न्यूट्रॉन) इन तीनों मूर्तों से निर्मित मानव देह के जीविक अन्धन से मुक्त होकर प्राणी “अमृत” या अमरत्व को पा लेता है। इस तथ्य की अविनाशिता धीरे धार में यो ली है: गुणमेतानतीत्य श्रीमेही देहतनुकृत्वात्।

अन्म मृत्यु जप दुःखविमुक्तोऽमृतं जन्तुने।

देही प्राणी अपने स्थूल धीरे की उत्पत्ति के कारण रूप

तीनों गुणों को उल्लङ्घन करके जन्म मृत्यु, पुद्गावस्था और सब प्रकार के दुःखों से मुक्त हुआ 'अमृतत्व' की प्राप्ति होता है।

इलेक्ट्रान-तरंगों के सूक्ष्म रूप में बलवान् इस धारमा की "इन्द्रागस्त स्थिता वापि नृज्ज्वलन् वा नृगुणान्वितम् । विमृष्टा नानु पश्यन्ति, पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषः" ( श्री भद्रूपचर्योक्ता अध्याय १३ श्लोक १ ) प्राणी-शरीर को छोड़कर जाते हुए धरमा शरीर में जा मान रहते हुए और तीनों गुणों से मुक्त होकर सांसारिक विषयों को भोगते हुए धारमा की अज्ञानीजन नहीं बने जाते केवल ज्ञान-रूप भव जाते (विन्होनि इसके प्रकाशमय रूप को जान लिया है) ज्ञानीजन ही इसे देखते या जानते हैं।

भारतीय दर्शन-ग्रन्थ और वास्तव्य प्राधुनिक विज्ञान (Modern Science) दोनों यही मानकर एक मत हाथों हैं एक ही विश्व-तथ्य को ज्ञान दोनों ने अलग अलग पारिभाषिक संज्ञाएँ देकर एक ऋषि के इस वचन को नितने सुन्दर रूप में सार्थक कर दिखाया है "एकं सद्ब्रह्म बहुधा वर्णितं" अर्थात्; एक ही सत् (विश्व-तथ्य) को विद्वान् भोग बहुत तरह से अपने अलग अलग तरीकों पर, कहते हैं। ज्ञान ज्ञान सत्ता प्रमाणों को देख कर भले ही हमें कुछ विभ्रम होजाय परन्तु प्रती बलकर जब यह प्रती परिभाषाएँ करते हैं तो एक ही मन्त्र में हम जान लेते हैं कि दोनों एक ही तथ्य का विस्तृत मिलता जुलता वर्णन कर रहे हैं। भारतीय ऋषियों का ज्योति-वचन सर्व व्यापी और अविनाशक धारमा ही प्राधुनिक विज्ञान का ज्योति-वचन सर्व-व्यापी और अविनाशक इलेक्ट्रान-तरंग-प्रकाश है। यह धर्म है और धनर है- यही नहीं इसका अविज्ञान प्राणी-शरीर की धनर है।

हमारा घर घर घटित

हम सब एक समस्त पथ के घर घर घटित हैं। रास्ते में चलते-चलते बड़ी बड़ाकर महसूस हुई कि कहीं रुक कर सोचिये। नीब डूबी कि फिर चलने लगे। सोने वाले घोर फिर उठकर चलने लगे दोनों हम एक ही हैं। हमारे वस्त्र में तो कोई फर्क नहीं रहता।

अपेक्ष नहि ब्रह्मचर्य में अपने घर घर घटित-घटित 'घोड़ हू इमोर्टैलिटी' (Ode to Immortality) में इस मास को समझाओ रास्ते में वो पाया है —

Our birth is but a sleep and a forgetting  
The soul that rises with us our life's star  
Hath had elsewhere its setting  
And Cometh from afar

अर्थात्; जिसे हम जान कहते हैं वह हमारी नीब की घटित है, विस्मृति का काम है। जो आत्मा हमारे जीवन के सतत की तरह हमारे साथ घाई है वह वही (उदय होने के पूर्व) कहीं अन्यत्र हुए चुनी है और वह कहीं बहुत दूर से घाई है।

जीवन घर है, इमीलिये उसे बार बार मृत्यु के बीच से नबीन बना लेना पड़ता है। जीवन में सब कुछ मर जाना है उसी रिक्तता की वल्लभ फिर भर देना है। समय बिगड़ में एक हो मर-प्राण (अथवा या विद्युत्-बुद्ध्यशील तरंगों) का विराम हो रहा है— 'आत्मव्यवस्थापन' लक्ष्मिनि'। हम सब उस अमोघ-निर्मल प्राण की अलग-अलग की अवलोकित कर लें। सम्पूर्ण का अंतिम बिनाश नहीं होता बस ही सम्पूर्ण से निकले हुए रूप का भी बिनाश नहीं होता बसकि सम्पूर्ण में उसके भिन्न जाने पर नई नई जीवन-क्रियाएँ

की प्रहमायना होती है। जहाँ हमारी भौतिक बेह का व्यवसाय होता है और जितने हम मृत्यु कहते हैं वह वास्तव में नये जीवन-वेग का एक घात है। यही जीवन का प्रयुक्त-रस है। “बेज” और उतरी ही एक दूसरी अभिव्यक्ति “काल” की अनन्त धारा में जीवन बहता जाता का रहा है। वह धमर है; वह अभिनामी है, वह सर्वगामी है और हम जो उस जीवन को अपना स्तुत भौतिक बेहों में डोये फिरते हैं स्वयं धमर हैं अभिनामी हैं और सर्वगामी हैं।



